नाटकपात्र.

सूत्रधार	नाटकआचार्य.
नटी	तिसकीपत्री.
विवेक	प्रधाननायक.
मति	तिसकीपत्नी.
वस्तुविचार	विवेककिंकर.
सन्तोष	तिसकासहचर.
पुरुष	उपनिषद्‌स्वामी.
प्रबोधउदय	पुरुषपुत्र.
श्रद्धा	सात्विकी, राजसी, तामसी ३ प्र.
शांति	विवेकभगिनी.
करुणा	शांतिकीसखी.
मैत्री	श्रद्धासखी.
विष्णुभक्ति	उपनिषत्सखी.
उपनिषद्	वेदांतशास्त्र.
सरस्वती	विष्णुभक्तिकीसखी
क्षमा	विवेकदासी.
वैराग्य, निदिध्यासन, संकल्प	मनके पुत्र.
परिपार्श्वक, पुरुष, मागधी, प्रतिहारी	ये दूसरेहैं.

महामोह	विवेकशत्रु.
चार्वाक	मोहकामित्र.
काम, क्रोध, लोभ, दम्भ, अहंकार.	ये महामोहके वजीर हैं
मन	संकल्पात्मक
दिगंबर, भिक्षु, क्षपणक, कपालिक	ये म
मिथ्यादृष्टि	मोहपत्नी.
विभ्रमावती	तिसकीसखं
रति	कामपत्नी.
हिंसा	क्रोधपत्नी.
तृष्णा	लोभपत्नी.
बटु, शिष्य, पुरुष, दौवारिक.	ये दूसरे

॥ श्रीः ॥

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक ।

कविगुलाबसिंहकृत.

जिसको

पं० गुरुप्रसादउदासीनने गुरुमुखी अक्षरोंसे

देवनागरीमें टिप्पणीसहित बनाया ।

तथा

मुमुक्षुजनोंके हितार्थ,

श्रीमान् १०८ स्वामी परमानन्दजीने

खेमराज श्रीकृष्णदासके

बंबई

"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम) यन्त्रालयमें

(प्रथमावृत्ति)

छपाकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९६२, शके १८२७.

॥ श्रीः ॥

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक ।

कविगुलाबसिंहकृत.

जिसको

पं० गुरुप्रसादउदासीनने गुरुमुखी अक्षरोंसे

देवनागरीमें टिप्पणीसहित बनाया ।

तथा

मुमुक्षुजनोंके हितार्थ,

श्रीमान् १०८ स्वामी परमानन्दजीने

खेमराज श्रीकृष्णदासके

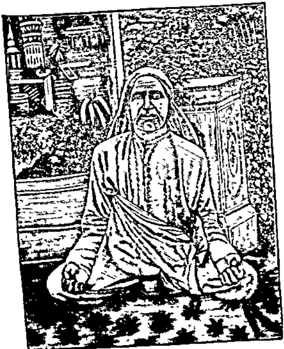
बंबई

"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालयमें

(प्रथमाऽऽवृत्ति)

छपाकर प्रसिद्ध किया ।

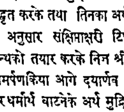
संवत् १९६२, शके १८२७.



श्री १०८ स्वामी परमानन्दजी
उदासीन द्वारकावाले.

विज्ञापन ।

विदित हो कि शान्तरसप्रधान गौणतया शृंगारादि अखिलरसोंसे संयुक्त अध्यात्मविद्या विरोधि नानापाखण्डमतोंके सिद्धांतोंको उच्छिन्न करताहुआ संस्कृतमें प्रबोधचन्द्रोदय नामा नाटक इस धरामण्डलमें सर्वोपरि वर्तमानहै सो संस्कृतमें अतिकठिन होनेसे भाषाके अभिज्ञजनोंको दुर्विज्ञेय जानकर कवि गुलाबसिंहजीने तिसका भाषामें दोहा सवैया कवित्त सोरठों करके अनुवाद कियाहै– इस नाटकमें प्रायः वेदांतका सर्वस्व सन्निविष्टहै और इसमें ऐसी सुगमरीतिसे ब्रह्मात्मैक्यत्वका प्रतिपादन कियाहै कि, मन्दवैराग्यवाले पुरुषभी इस ग्रन्थके विचारसे अध्यात्मतत्त्वका लाभ करसकतेहैं–यद्यपि उक्त कविजीकी भाषा बहुत सुगम और साधारण पुरुषोंकोभी समुझने योग्यहै–तथापि–कहीं कहीं स्थलविषे विषयको अतिकठिन होनेसे गुरोंके बिना स्वयं समुझना अशक्यहै ऐसा जानकर और अधिकारीजनोंको विचारपूर्वक इसग्रन्थके अवलोकनसे बोधोत्पत्तिके अर्थ श्रीसाधुबेलाके निवासी परमदयालु पण्डित गुरुप्रसादजीने इसग्रन्थको शुद्ध करके तथा इसके नीचे बडे परिश्रमसे श्रुति स्मृति पुराण वचनोंको उद्धृत करके तथा तिनका अर्थ अतिसुगम रीतिसे दर्शायकर संस्कृत प्रबोधचन्द्रोदयनाटकके अनुसार संक्षिप्ताक्षरी टिप्पणीरूपसे प्रगट करके तथा पण्डितजीने इसटिप्पणीसहित ग्रन्थको तयार करके निज श्रीगुरुश्री १०८ मान् परमहंस-परमानन्दजीके चरणपङ्कजोंमें समर्पणकिया आगे दयार्णव श्रीगुरुदेवजीने अपने अनुग्रहसे अधिकारीजनोंके कल्याणार्थ और धर्मार्थ बाटनेके अर्थ मुद्रित करवायाहै–अब आशाहै कि इस ग्रन्थप्रतिपाद्यविषयके मनन करनेसे अधिकारी जन आवरण शक्तिविशिष्ट अज्ञाननिवृत्तिपूर्वक परमानन्दकी प्राप्तिरूप जीवन्मुक्तिके सुखका अनुभव करतेहुए पण्डितजीके परिश्रमको सफलकरेंगे इति शम्–



श्रीगणेशाय नमः ।

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

अथ श्रीमत्कवि गुलाबसिंह कृत—

प्रबोधचन्द्रोदय नाटक भाषा प्रारम्भः ।

दोहा ।

गौरीपुत्र गणेशपद, वन्दों वारंवार ॥
कार्य कीजिये सिद्ध मम, देह सुबुद्धि उदार ॥ १ ॥
जाके नाम प्रतापते, जलपर शैल तराहिं ॥
वह रघुनायक दासके, सदा वसे मनमाहिं ॥ २ ॥
गुरुनानक गोविन्द गुरु, जासम और न कोइ ॥
अभिवन्दन पदकमल तिन, जोर सदा कर दोइ ॥ ३ ॥
भारत भूमिपुनीत पद, तपोज्ञान अवतार ॥
मानसिंह गुरुको नमो, तारण करुणासार ॥ ४ ॥

नराज छन्द ।

प्रबोधचन्द्र नाटकं, सुबोध ग्रन्थ मैं करों ॥
अलंब साधु संगको, विचार चित्तमें धरों ॥
सुने पढै सु जे जना, निवार मोह बन्धना ॥
लहै अपार मोक्षको, टुटै समस्त फन्धना ॥ ५ ॥

सवैया ।

भूपन बोध सुबोध नहीं अति कौतुक माहिं रहैं लपटाए ॥
बोध बिना जगमोक्ष कहां इम संतसभै सुखवेद अलाए ॥

---

(१) ग्रन्थकी निर्विघ्न समाप्ति रूप । (२) आदि अन्तके मङ्गलमें इनको वार-वारोंका मङ्गल करना । (३) करे तन्तप मुनि । सनकादेवनुरेवत्तन्द । इत्यादिवेद ॥

साहित्य

विज्ञापन ।

विदित हो कि शान्तरसप्रधान गौणतया शृंगारादि अखिलरसोंसे संयुक्त अध्यात्मविद्या विरोधि नानापाखण्डमतोंके सिद्धांतोंको उच्छिन्न करताहुआ संस्कृतमें प्रबोधचन्द्रोदय नामा नाटक इस धरामण्डलमें सर्वोपरि वर्तमानहै सो संस्कृतमें अतिकठिन होनेसे भाषाके अभिज्ञजनोंको दुर्विज्ञेय जानकर कवि गुलाबसिंहजीने तिसका भाषामें दोहा सवैया कवित्त सोरठों करके अनुवाद कियाहै– इस नाटकमें प्रायः वेदांतका सर्वस्व सन्निविष्टहै और इसमें ऐसी सुगमरीतिसे ब्रह्मात्मैक्यत्वका प्रतिपादन कियाहै कि, मन्दवैराग्यवाले पुरुषभी इस ग्रन्थके विचारसे अध्यात्मतत्त्वका लाभ करसकतेहैं–यद्यपि उक्त कविजीकी भाषा बहुत सुगम और साधारण पुरुषोंकोभी समुझने योग्यहै–तथापि–कहीं कहीं स्थलविशेष विषयको अतिकठिन होनेसे गुरोंके विना स्वयं समुझना अशक्यहै ऐसा जानकर और अधिकारीजनोंको विचारपूर्वक इसग्रन्थके अवलोकनसे बोधोत्पत्तिके अर्थ श्रीसाधुबेलाके निवासी परमदयालु पण्डित गुरुप्रसादजीने इसग्रन्थको शुद्ध करके तथा इसके नीचे बडे परिश्रमसे श्रुति स्मृति पुराण वचनोंको उद्धृत करके तथा तिनका अर्थ अतिसुगम रीतिसें दर्शायकर संस्कृत प्रबोधचन्द्रोदयनाटकके अनुसार संक्षिप्ताक्षरी टिप्पणीरूपसे प्रगट करके तथा पण्डितजीने इसटिप्पणीसहित ग्रन्थको तयार करके निज श्रीगुरुश्री १०८ मान् परमहंस-परमानन्दजीके चरणपङ्कजोंमें समर्पणकिया आगे दयार्णव श्रीगुरुदेवजीने अपने अनुग्रहसे अधिकारीजनोंके कल्याणार्थ और धर्मार्थ बाटनेके अर्थ मुद्रित करवायाहै–अब आशाहै कि इस ग्रन्थप्रतिपाद्यविषयके मनन करनेसे अधिकारी जन आवरण शक्तिविशिष्ट अज्ञाननिवृत्ति-पूर्वक परमानन्दकी प्राप्तिरूप जीवन्मुक्तिके सुखका अनुभव करतेहुए पण्डितजीके परिश्रम-को सफलकरेंगे इति शम्–



प्रवलारिसमूहमहीपनके उरपाटनको नरसिंहमई ॥
वलभूपतिसिंधुधसीधरनी इन फेर वराहउधारलई ॥१२॥
दिगनारविलासनिकाननमें जिहकीरतिके श्रुतिटंक वनाए ॥
सभदिग्गजेंकानसुतालवडेविधताहिंसफालनपौनउपाए ॥
तिहँसंगमिले अतिनाचत है भवताहिप्रताप सुज्वालवढाए ॥
तिन आप गुपाल सुएहकह्यो वहुनाटक भूपति देहु दिखाए१३

दोहा ।

सहज सुहृदस्वभाव यह, कीरतिवरमा भूप ॥
ताहित उदम थोकियो, दिग्जेयपरमअनूप ॥ १४ ॥
ताव्यापारअंत्रतभयो, परमानन्दहमार ॥
विविधविपयरसपरसकर, भये मनोजविकार ॥ १५ ॥
ताव्यापारदूपितमनो, वासर दये विताय ॥
कृतकृत्यभये सुआजहम, भूपतिराजदिवाय ॥ १६ ॥

सवैया ।

प्रसिद्ध अमातनभूपतिकेंभुविपक्षवलीनृप मारगिराए ॥
रक्षपालकरी सगली धरणी पुनि याहि किसीसह छत्र फिराये॥
सुपयोनिधिमेखलयाहधराशिर भूपनके इनराज ठराए ॥
रस शांत प्रयोग निवेदनके जग आपविनोदकरे इमभाए॥१७॥

---

(१) दिग्गजोंके कानोंरूपीतालोंकर उत्पन्नभया जो बहुत पवन। (२) तिसपवनके साथ वृद्धिको प्राप्तहोयकर संसारमें प्रवृत्तहोरहाहै प्रतापरूपअग्निजिसका। (३) गोपाल। (४) शङ्ख। (५) शांतरसहै प्रधानजिसमें ऐसानोनाट्यानुकरण तिसके निवेदन कहिये मनावनेकरके ॥

प्रवलारिसमूहमहीपनके उत्पाटनको नरसिंहमई ॥
वलभूपतिसिंधुधसीधरनी इन फेर वराहउधारलई ॥१२॥
दिगनारविलासनिकाननमें जिहकीरतिके श्रुतिटंक वनाए ॥
सभदिग्गजकानसुतालवडेविधताहिंसफालनपौनउपाए ॥
तिहसंगमिले अतिनाचत है भवताहिप्रताप सुज्वालवढाए ॥
तिन आप गुपाल सुएहकह्यो वहुनाटक भूपति देहु दिखाए १३

दोहा ।

सहज सुहृदस्त्रभाव यह, कीरतिवरमा भूप ॥
ताहित उदम थोकियो, दिग्जयपरमअनूप ॥ १४ ॥
ताव्यापारअंत्रतभयो, परमानन्दहमार ॥
विविधविपयरसपरसकर, भये मनोजविकार ॥ १५ ॥
ताव्यापारदूपितमनो, वासर दये विताय ॥
कृतकृत्यभये सुआजहम, भूपतिराजदिवाय ॥ १६ ॥

सवैया ।

प्रसिद्ध अमातनभूपतिकेहुविपक्षवलीनृप मारगिराए ॥
रक्षपालकरी सगली धरणी पुनि याहि किसीसह छत्र फिराये॥
सुपयोनिधिमेखलयाहधराशिर भूपनके इनराज ठराए ॥
रस शांत प्रयोग निवेदनके जग आपविनोदकरे इमभाए॥१७॥

---

(१) दिग्गजोंके कानोंरूपीताळेंकर उत्पन्नभया जो बहुत पवन । (२) तिसपवनके साथ वृद्धिको मांप्तहोयकर संसारमें मवृत्तहोरहाहे मतापरूपअग्निसका। (३) गोपाळ। (४)शत्रु। (५) शांतरसहै मधाननिसमें एसाजोनाट्यानुकरण तिसके निर्वेदन कहिये मनावनेकरके ॥

याके वलकल ऐसे सोहै। तडितपुंज जनमें मनमोहै ॥
वनफलमिष्टमधुररधुनिवेदा ।मनकोनिखिलमिटावैखेदा॥५९॥
सुंदर शीशजटा अतिकारी। मनोविरंचि स्वहाथसँवारी ॥
तपको तेज भालमें दमकै। किरणासहितमनोशशिचमकै६०
हेमजनेऊ याके अंगा। स्वर्गफूल सोभे सरवंगा ॥
अहोपिताफलहित वनगए । याके दरशन ताहिं न भए॥६१॥
ऋषिआगमनऔसरकोजान। वारवधू तह कियो पयान ॥
वहुआईनौकाकेपाही ।मुनिवर आयोआश्रममाही॥६२॥
शृङ्गीऋषि सुतआइ निहारा। रंचककरे न वेद उचारा ॥
अग्निहोत्रकी अग्नि सुजोई। नाहि जगाई निशिकोसोई॥६३॥
वारवधू जिहपंथ पधारी। दृष्टि तहाँ शृङ्गीऋषि धारी ॥
पूछ्यो पिता कहां मति गई। पढे नवेद नहीं कृतकई ॥ ६४ ॥
शृङ्गीऋषि तब वैन उचारे। पिताहुते कछु भाग हमारे ॥
ब्रह्मलोकते मुनिवर आए। नाहिसमश्रूमुख निरमाए॥६५॥
ताको रूप निहार्‍यो जोई। अवलौ चीत चितारों सोई ॥
कोमल वलकल तनमेंसोहैं। दोदो शृंग उरन मन मोहैं ६६ ॥
शीशजटाकोमलअतिश्यामा। भाल तिलक हाटकढिगदामा ॥
नाककरणमें छिद्र सुकीने। स्वर्गफूल तामें गुहिदीने ॥६७॥
नयनसरोज दयारसभीने। सच सुधा श्रम करे सुखीने ॥
मेरीओर कृपाकर निरखे। प्रेमडोर मानो मनकरखे ॥ ६८ ॥
याविधि वेद सुकीन उचारा। सुनिकर हर्‍यो सुचीत्त हमारा ॥
ऐसे शृङ्गीऋषिहिअलायो। पितालख्योअवलाभरमायो ६९

(१) मुखके बाल ॥

अंतसमै यम दीनकरे तिन हेर महा करुणारस आए ॥
बोध उपावन हेत मनो नरनाहनके इह ग्रन्थ वनाए ॥ ६ ॥
भानुमरीचि सुनीर सम पुनि जा अज्ञान जगत्त वनायो ॥
वायु अकाश सुपावक नीर मही पुनि लोक सुतीन उपायो ॥
जाहिं पिखेरजुसापजिमें जगफेरसभोतिनमाहिं विलायो ॥
उज्वलआतमवोध महाहमआनँदसों उरमाहिं धियायो ॥७॥
प्रत्यक्ज्योति सनातन जोअग व्यापरही सभमाहिंसुहाई ॥
रिदशांतविषेअतिभासतहै कृतसंयमकोजिहआनन्दताई ॥
विधुचूडनिरोधसुवायुभलेब्रह्मरन्ध्रहतेअतिऊँचचलाई ॥
दृगतीसरव्याजसुभालविषेशिवसंयमवंतसुआपदिखाई॥८॥

दोहा।

कीरतिवरमा नाम जिह, भूपति वडो रसाल ॥
ताहिसभामें विमलमति, आहि प्रधानगुपाल ॥ ९ ॥
वर्ष एक नाटक तहां, भयो सुसभामंझार ॥
जाको हेरसुज्ञानलहि, भये भूप भवपार ॥ १० ॥
याकों सुने जु कानमें, नीके चीतलगाइ ॥
आसुरसंपति दूर तज, वेगज्ञान वहु पाइ ॥ ११ ॥

सूत्रधार उवाच स्वपत्नी मति ॥

सवैया।

वहुवातनको कछु कामनहीं अव आयसुमोहिंगुपालदई ॥
सभभूपति जांमुकुटामणिके पदपंकज आरती आनिकई ॥

(१) अविद्या तत्कार्यमलरहितस्वप्रकाशरूप। (२) सेवते हैं अर्थात्उपासते हैं।
(३) अनृत जड दुःखरूपअहंकारादिकोंसे प्रतिकूलहोयकर अर्थात् सत्यज्ञानानन्दादिरूपकर

...डराए । हँसुत ऋपि नाहिं राक्ष...
ताके गीत सुनी नाहिं काना । नातर तेरे हरहैं प्राना ।...
याविधि मुनिवर बहुत डराए । पर शृङ्गी बहुरूप ध...
मुनिवर भये प्रातमुनिकाला । गयो जवैवहुविपिनविशा...
तवमुनिगणिकाझुंडसुआयो । शृङ्गीऋपिपिखमोलझुकाय...
तुम अपने तप विपिनमझारी । मोहि लेचालोकरुणाधारी...
तव संगचल्यो मुनिवर ऐसे । प्राणनसंग जीव जग जैसे...
नैनकटाक्ष सुछविहिकपोला ।निरखभयोऋपिकोमनलोला...
ताकी मंदगती झुनकारा । मुनिमुनिऋपिमनभजेविकारा ।
नौकाभीतर वैठो जवही । पहुँतो लोमपादपुरतवही॥७४॥
मुनिवर नगर जवै पगधारा । वरपा भई मुतहाँ अपारा ॥
यहविधि तपको जाहि प्रभाऊ । अवलाऽधीनभयो मुनिराऊ ७५
शांता भूपतिदुहिता जोई । ताहि वरी पुर भीतर सोई ॥
याकी कथा बहुतविस्तारा । कहांलगे मम करोंउचारा॥७६॥

दोहा ।

मानवकी गनती कहां, देवनमें प्रधान ॥
त्यागे धर्म क्षणेकमें, रंच लगावो वान ॥ ७७ ॥

सवैया ।

...नारि सुजोरसुरेश्वरजाइ भयो सर मोहिचलायो ॥
...ठि = [illegible] ुरानन जो रतिके हितसो ढुंढिता प्रति धायो ॥

...त्ति । (२) [illegible] ॥

ञारिसमूहमहीपनके उरपाटनको नरसिंहमई ॥
भूपतिसिंधुधसीधरनी इन फेर वराहउधारलई ॥१२॥
नारविलासनिकाननमें जिहकीरतिके श्रुतिटंक बनाए ॥
दिग्गजकानसुतालवडेविधताहिंसफालनपौनउपाए ॥
संगमिले अतिनाचत है भवताहिप्रताप सुज्वालवढाए॥
आप गुपाल सुएहकह्यो वहुनाटक भूपति देहु दिखाए१३

दोहा।

सहज सुहृदस्वभाव यह, कीरतिवरमा भूप ॥
ताहित उदम थोकियो, दिग्जयपरमअनूप॥ १४॥
ताव्यापारअंत्रतभयो, परमानन्दहमार ॥
विविधविपयरसपरसकर, भये मनोजविकार ॥ १५॥
ताव्यापारदूपितमनो, वासर दये विताय ॥
कृतकृत्यभये सुआजहम, भूपतिराजदिवाय॥ १६॥

सवैया।

सिद्ध अमातनभूपतिकेंमुनिपक्षवलीनृप मारगिराए ॥
पालकरी सगली धरणी पुनि याहि किसीसह छत्र फिराये॥
पयोनिधिमेखलयाहधराशिर भूपनके इनराज ठराए ॥
स शांत प्रयोग निवेदनके जग आपविनोदकरे इमभाए॥१७॥

इंदु भेजीगुरुकी अवला बुद्धसो सुतताहिके वीच उपायो ॥
कौन अपंथन पांउधेरे जगमोसरजाहिको चीत भ्रमायो७८॥

दोहा।

यावििधिके अवलाहने, तपी वडे वलवान ॥
गुलावसिंह वैरागको, करें मूढ अभिमान ॥ ७९ ॥

रति रुवाच ॥

सवैया।

सत आर्य यद्यपि तूंभुजमें जगजीतनको वल आपधरें ॥
जग होइसहायक जाहिवली पुनितां अरिते बलवंत डरें ॥
सुनिये यमंआदिक आठ वजीरविवेकसहायक वेदररें ॥
वहु जंग उपाय करें सुनियो इहते उरमें हम नीतडरें ॥ ८० ॥

काम उवाच ॥

सवैया।

भामिनि रायविवेकहिकेयमआदिक आठ अमात सुनाये ॥
तेरणरंगमहीपहिले हमने सवठौरनठौर दवाए ॥
कौन अहै जगभीतरसो हम जीवत ताहिको नाम अलाये ॥
वामउरू तज चिंतसदा तुमक्योंमनमें अरिते डरपाये॥८१॥

दोहा।

कोपे आगारीरहे जो, कौन अहिंसानार ॥
ब्रह्मचर्यको मैं सुनो, क्षणमहि डारों मार ॥ ८२ ॥

---

(१) गुरु बृहस्पतिकी स्त्रीको चन्द्रमा लेगयाभया। (२) यमनियमाऽऽसन प्राणायामप्रत्याहार धारणा ध्यानसमाधि। (३) क्रोध। (४) पर प्राणिवियोगानुकूल व्यापारका नाम हिंसा ताका अभाव अहिंसा.। (५) आठप्रकारके मैथुनका त्याग ब्रह्मचर्य्य ॥

कवित्त।

प्रवोधचन्द्रनाटकं सुआहिनटतोहिढिग,
कृष्णमिश्रआपजोईपूरववनायोहै ॥
कीरतिवरमके समीप सोई नाटकरो,
हेरनको भूपतिको मन उमगायोहै ॥
सुनो सूत्रधार तुमप्रगटविचारकरो,
सभाहूसमेतरिंदेकौतकसुहायोहै ॥
सुनिकै गुपालवाक सूत्रधारचारवाक,
नाटककेहेत निजनारिको बुलायोहै ॥ १८ ॥
नेपथ्यकीओर तिनेहेरके पुकारकह्यो,
आर्येसुआउ इत तवी नटी आईहै ॥
आर्य्य सुकौन काज मोहिंको बुलायो आज,
कीजिये सुकाज अव वेर क्योंलगाईहै ॥
सूत्रधार ताहिको उचार पुनिएहु कह्यो,
आर्ये अजान नाहिं जाहितबुलाईहै ॥ १९ ॥
नाटकप्रवोधचन्द्र चन्द्रमासमान जग,
दीजिये दिखाइ यों गुपालमन आयोहै ॥
भूपति विपुलवल सोईतू अरण्यजान,
पावक प्रतापवनसंगते वढायोहै ॥
ताहिकी सुज्वाल तीन भौनमें विसाल वढी,
कीरतिको पुंज लोकतीनहूं में गायोहै ॥

(१) नाटककाआचार्य। (२) नेपथ्यनामकनातकाहै ॥

निऋषि वहुभाँति डराए। हेसुत ऋपि नहिं राक्षसआए॥
गीत सुनी नहिं काना। नातर तेरे हरहैं प्राना ॥ ७० ॥
विधि मुनिवर वहुत डराए। पर शृङ्गी वहुरूप ध्याए॥
वर भये प्रातपुनिकाला। गयो जबैवहुविपिनविशाला७१
ुनिगणिकाझुंडसुआयो। शृङ्गीऋपिपिखमोलझुकायो॥
अपने तप विपिनमझारी। मोहि लेचालोकरुणाधारी७२॥
संगचल्यो मुनिवर ऐसे। प्राणनसंग जीव जग जैसे॥
कटाक्ष सुछविहिकपोला।निरखभयोऋपिकोमनलोला७३
ी मंदगती झुनकारा। सुनिसुनिऋपिमनभजेविकारा॥
भीतर वैठो जवही। पहुँतो लोमपादपुरतवही॥७४॥
वर नगर जवै पगधारा। वरपा भई सुतहाँ अपारा॥
विधि तपको जाहि प्रभाऊ। अवलाऽधीनभयो मुनिराऊ ७५
भूपतिदुहिता जोई। ताहि वरी पुर भीतर सोई॥
कथा वहुतविस्तारा। कहांलगे मम करोंउचारा॥७६॥

दोहा।

मानवकी गनती कहां, देवनमैं प्रधान॥
त्यागे धर्म क्षणेकमें, रंच लगावो वान॥ ७७॥

सवैया।

मनारि सुजोरसुरेश्वरजाइ भयो सर मोहिचलायो॥
ठे चतुरानन जो रतिके हितसों दुहिता प्रति धायो॥

लीनेचन्द्रहास प्रतिकूलनृपनासकर,
जीतिके गुपालसुनरेशढिगआयोहै ॥
सामराज राजकोभिषेक जिन फेर जग ॥
कीरति वरमदेवभालमें करायोहै ॥ २० ॥

सवैया ।

गमहीपिसताशनिआ अवलौं नरमुंडनताल वजावैं ॥
क्कैकचर्पिगकपोललटीसुपिशाचनियांतिहनृत्यदिखावैं ॥
कुंभमृदंगनपीन वली धसि नाद अनेक सुपीठ सुनावैं॥
ाँति सुनो नटनीजगमें रणरंगमही अवलौं यशगावैं२१॥
शांत प्रसन्न विनोदनके हित हेनटनी सुगुपाल वुलाये ॥
याहि सभा वहुनाटकजो धर स्वांग भले हम देहिदिखाये
ी तव एह कह्यो भरताहित स्वांगन मानवलेहु मगाये ॥
भाहि अचंभ वड़ो मनमें, सुन आर्य्य एहु गुपालसुभाये २२
प्राक्रमके रणरंगमही जिन मंडल भूपनके सुभगाए ॥
कानलौंतानकठोरधनुंरणमंडलमें शरओघचलाए ॥
वाणनके अरिखेतविषे सुतुरंगनके वहु पुंज गिराये ॥
आयुधधारमहीधरसे गजकोटिनकोटि सुभूमिरुलाए२३
र्णसैन सुक्षीरनिधी भुजमंदरघात सुव्याकुलकीनी ॥
सैनपयोनिधिको मथिकेवलभार्वैविजयलक्ष्मीजिनलीनी॥
नके रणकी मुनिवृंदसभे अवलौं जसकीरति गाहि नवीनी॥
शांतविषेतिनकीमतिआर्य्यमोहिकहोकिहभाँतिसुभीनी २४

) चक्रवर्तीराज । (२) गण्डस्थल । (३) कर्णसेनराजा ।

पुनर्वार उवाच स्वपक्षमात–

दोहा ।

ब्रह्मणज्योतिस्वभावते, समस्वरूप जगआहि ॥
कारणपाइ विकारभज, पुनि निज रूप समाहि ॥ २५ ।
नृपकुल प्रलय कृशानुसम, चेदिपती जगआहि ॥
चन्द्रवंशनृपराजको, दूरकियोपुनिताहि ॥ २६ ॥
चन्द्रवंशनृपराजहित, उद्यम कियो गुपाल ॥
मार विरोधी थिरकियो, राज गुपाल रसाल ॥ २७ ॥

सवैया ।

कल्पांत प्रभंजनक्षोभभयोसरितापतिज्यों सवशैलदवाए ॥
कृतकार्य फेर गहे थिरता निजवेलकी भीतरआय ठराए ॥
भगवंतके अंशजयेनरजे सभ भूतनकेहित प्रेम वढाए ॥
नरमंडन ले अवतार मही कृतकार्यते रस शांति लगाए॥२८॥
भृगुनन्दनरामकोभामनीपेखसुवाहुजवारइकीसखपाए ॥
नृपशोणितनीर सुमांसवँसावहु पंकमई तटनी भटनाए ॥
नृपनारि कुमार सुवृद्धनलों करुणाविन धारकुठार चलाए ॥
धरभार उतार उखार कुलं नृप शांति भये तपमाहि लगाए२९

दोहा ।

परशुराम जिम आदि यह, कृतकार्य्य गोपाल ॥
परम शांतिनिष्ठा भजी, रसमें वडो रसाल ॥ ३० ॥

---

(१) चेदिदेशाधिपति शत्रुध्वंसेन । (२) कीर्तिरूपं राज्यके राज्यको ।
(३) भरतार स्वरूप । (४) अभिगतमांस ॥

लोभें जवै करमै धरे, चन्द्रहास ...
सत्यं असतेयं अपॅरिग्रह, भामनि मुणनिहार ॥ ८३ ॥

सवैया।

यमनेमसुआसनप्राणयमं प्रत्याहारवलीजगध्यानअलाये ॥
धारणा और समाधिसुनो चितहोइ इकाग्रतो उपजाये ॥
चितभीतर रंच विकारकरों इनको जडमूल सुदहु उठाये ॥
इन जीतनहेतु रची अवला यमनेम तवे हमरे वशआए॥८४॥
दूरविलोकन नारिनिको अरु ताहि संभापन दूर रहे ॥
हास विलास सकेलं आलिंगन नाहि इकंत सुवात कहे ॥
जन संयमव्रत कहावतजे तजसोंधतपोवन जाइवहे ॥
चित्तमाहि चितारत जो युवती क्षणमें मनताहि विकारगहे८५॥
मोह अमातसुमातँसंरमद दंभ तथा पुन लोभ अलाए ॥
फारयमादि वजीर लय वहिकान इकंत सुमंत्रदिढाए ॥
मोहमहीप अवर्म वजीर यमादिक गोप लग तिनपाए ॥
जो यमनेम करे जगमें, हरिके हित नाहि सुलोक दिखाए ८६॥

इति ध्यान ॥

दोहा।

शमदम और विंयकला, कामक्रोधमदमान ॥ ८...
में सुनियो निजकानमें, एको जनम अस्थान ॥

(१) पर द्रव्यके हरनकी इच्छा का नाम स्तेन है। (२) पदार्थ... का नाम ग्रह है। (३) ...का नाम अमात्य है। (४) ...अन्तःकरण नाम आसिमद है। (५) पुत्रादिद्वारा। (६) मन्त्र। (...) ...मुनीने इसं अंतमद करिके मनका गर्व ॥

जीत विवेक सुमोह जिम, वोधउदे जगकीन ॥
जीत करण वलराज तिम, कीरति वरमा दीन ॥ २१ ॥

अथ नेपथ्ये कलकला शब्द ।

सवया ।

व कनातकेवात सुनीसुमनोजवलीयह काननमाहीं ॥
पभरे सुख एहुकही नटनीचसुवोलतयोंमुखमाहीं ॥
वतहीं हमरे जगमें तुम मोहकि हार कहें जनमाहीं ॥
पि शिल्पविवेकहिकी जड मूल उखारदयो भवमाहीं॥२२॥
नवातशिल्पउरचो मनमें पुनि संभ्रमहेर सुनारि अलायो॥
तेकंठभुजा घनपीनकुचालहि संग रोमांच अनंग सुआयो॥
गमादन सोभ अपार वनी मदघूमतनयन चले अलसायो॥
व भागचले इह ठौरहिते सुनिके ममवाकमनोपुनशायो २३
नभाख तजीरंगभूमितिनो तव आय मनोज प्रवेशकयो ॥
लिके कच नील कपोल लटी रतिकंठविषे हँस हाथदयो ॥
गकंज चढाइ उठाइभुजा रतिनाथ महा उर क्रोध छयो ॥
ताऽधम पापि सुजीवतमें रति नाहि विवेक सुकोनभयो २४
वलौं मनमाहिं विवेक रहे सभ आगमते उपजा इह जोइ॥
विलौं नहिं नीलसरोरुहिसें दृगनारिकटाक्षलगे सरकोइ ॥
प जीत तजे नवखंडमही घरनारि भजें कर जोर सुदोई॥
नतराननलौं जगमाहिं पिखे दृगनारि अजीत नहीं भटहोई २५

काम उवाच ॥

सवैया ।

उत्पत्तिकोस्थानमएकअहे मनसोजगभीतर तातअलाया ॥
हम हैं पुन भ्रात विमात सुनो बहुगोप प्रकार बने अवगाया॥
मन पूर्व ईश्वर संग कीयो, निजनारिबखानत ताहिं सुमाया
जिनते उत्पत्ति भई हमरी मननाम वही सुत ताहि उपाया ८८
मन तीनहु लोकसु आप रचे पुन ताहि विषे कुल दोइ उपाई ॥
मन एक प्रवृत्ति कहे पतिनी सुनिवृत्ति तथा जग दूसरि गाई ॥
मोह प्रधान प्रवृत्ति रची कुल तीनहु लोकनमाहिं फिलाई ॥
सुविवेकप्रधान निवृत्तिजनीकुलसो विरलीजगमाहि चलाई८९

रति रुवाच ॥

सवैया ।

सुत आय जो इहभांति अहे जगभीतर एक सुतातुमारा ॥
किह कारण वैरभयो तुमरो धुजमीनकरो ममएहु उचारा ॥
तिह भ्रातनमें इहभात सुवैरन मोहि सुन्यो यह कानमझारा॥
कविसिंहगुलाब कहे रति नाहसुनो रतिवैरको कारणभारा९०॥

काम उवाच ॥

सवैया ।

जे इक आमिषते निपजे तिन वैर प्रसिद्ध कर्‍यो जगमाही ॥
भूमिनिमित्त लरे कुरुपांडव भूप खपे जिनके रणमाही ॥

(१) दूसरी माता ॥

थाल जहां गृह ऊंचवन गजदंतनमंच सुसजसवारी ॥
मध्यविराजत चंद्रकलासम वारिजनैन सुनूतननारी ॥
भूपन चंपकहार घने तनुचन्दन कुंकुमगंध उदारी ॥
चंदउदे तम दूरभये निशिमाहिं खिरी सुमनोजकी वारी॥३६॥
इह आयुध मोहि जंयंत सदा इन धारमलेजगआहिवलीको ॥
इन होवत कौन विवेक अहे पुनि वोध उदे नहहोत कलीको॥
जनऔरनकीजगकौन कथा धृतसंयम जोजन जाइ गलीको।
दृगकंज फिराय पिखे युवती चितयोंतरफे जन मीनथलीको३७

रति उवाच ।

दोहा ।

आर्यपुत्र सुअतिवली, भाषें मुनी अनेक ॥
महामोहभूपालको, याजग शत्रु विवेक ॥ ३८ ॥

काम उवाच ।

सवैया ।

तवनारि सुभावते संकभई प्रतिपक्षनते हमनाहिंडरें ॥
पिखयद्यपिफूलशरासन औसरमें करभीतरआपधरें ॥
जन तदपि आयसुमोहि उलंघ मुहूरत धीरज नाहिं धरें ॥
सुन वामउरू सुरदैत्यसभे जगभीतरहे वस मोहि करें ॥ ३९ ॥

दोहा ।

जानत काम ननारि कछु, शृङ्गारपिवन माहिं ॥
मोनरचीत्तभ्रमाइयो, गयोभूपगृहमाहिं ॥ ४० ॥

(१) मनका हेतु । (२) लड़ाईमें ॥

भारत खंडकी नूतन नारि भई विधवा जिन संगरमाही ॥
होवतहीं यह वात आई कछु नाहिं भई सुनई भवमाहीं॥९१॥
हमरे मनतात सुपूर्वएरीतितीनहुलोकसुआप वनाए ॥
हमहूं अतिवल्लभ तात हिके इहते हम तीनहुलोक दवाए॥
शम औ दम और विवेक पिता वलहीन पिखे वनवास पठाए॥
अवते अववंत उपायकरें पितभ्रातनमूलसु देहु उठाए॥९२॥

रति रुवाच ॥

सवैया।

सुतआर्यक्यों पुनि पापइसो मति हीनकरेंवहुसंगतुमारे ॥
उर द्वेष वध्यो तिनके अतिहीं इहभांति चहें जगपापकरारे॥
अथवा इह कौनउपाय सुनो धुजमीन तुमे मन माहि विचारे॥
इहभांति सुने रतिवाकजवै तव वोलउठे रतिप्राणपियारे॥९३।

काम उवाच ॥

दोहा ।

भामिनि गूढ सुवीजइक, है पुन कह्यो नजाइ ॥

रति रुवाच ॥

आर्यसुतक्यों नाकहें, मोको तूं प्रगटाइ ॥ ९४ ॥

काम उवाच ॥

दोहा ।

रति तूं नारिसुभावते, भीरू अतिडरपाइ ॥
[illegible] मोसौं कह्यो नजाइ ॥ ९५ ॥

ताकी कथा संक्षेपते, कहौंसुनो चितलाइ ॥
वामउरू संसामिटे, तोहिं निखल डरजाइ ॥ ४१ ॥

चौपाई ।

लोमपाद इक भूपति भारा । जाकोयश सबभौन मँझारा ॥
दशरथको वहु मीत कहीजे । जाको हेर अमंगल छीजे ॥४२॥
ताके देशको वहु विस्तारा । वर्षा होइ न ताहि मझारा ॥
ताकी प्रजा दुखी सभऐसी । तपत अल्पजल मछली जैसी॥ ४३ ॥
विप्रंजोतिकी भूप बुलाए । वर्षा होइ सुकौन उपाए ॥
विप्रन वहुविधिकीनविचारा । भूपतिको इह भाँति उचारा ॥४४॥
शृङ्गीऋषिवन भीतर जोई । आइ इहाँ तव वर्षा होई ॥
वहनिरपेक्ष महामुनिज्ञानी । आवे किहप्रकार रजधानी॥ ४५ ॥
लेन न ताको कोई जावे । शापअग्निते सभ डर पावे ॥
तव तिन वारवधू सबुलाई । दानमानकर पास विठाई ॥ ४६ ॥
शृङ्गीऋषिवनजाहि अगारा । ताको लियावो नगर मझारा ॥
सुनकर वारवधू अकुलानी । शाप अग्निते अति डरपानी॥४७॥
पर भूपतिकी आयसु जोई । मेटि न सके कदाचित सोई ॥
तव तिन एक उपायसुकीनो । नौकाबांध स्थंडलकीनो ॥ ४८ ॥
तामें रंभपुंज जराए । लाडूकरणेपूरफललाए ॥
कहूं जलेवी कहूं अपूपा । कहूं सुवृंदी रची अनूपा ॥ ४९ ॥

---

(१) ज्योतिषी । (२) मुनिशिखरपद । (३) पेड़ा ॥

रति उवाच ॥

दोहा।

आर्यसुत सोकौन वहु, कैसोकरम कमाइ ॥
विनभाखे थल मीनसम, मेरो चित्त तरफाइ ॥ ९६ ॥

काम उवाच ॥

सवैया।

भामनि नाहिडरें उरमैं हते आशविवेक सुआश ठराई॥
याकुलमैं निसकालसमाविद्योजिह नाम सुराक्षसी काई ॥
लेवहिगी अवतार सही उरभीतर नाहिं दया कछु राई ॥

दोहा।

किंतम वेल तामे रची, फूल पात बहु भ
लाचीदाणेकी तहां, रची सुदाख वनाइ ॥

चौपाई।

याविधधारअडंवर वाला। गइ तहांजहँ विपिन
मुनिआश्रमते किंचित दूरा। नाका थापी नार गहू
पोडशवरसनकी वहु वाला। गईं तहां जह मना
लाडू करणपूर फल जेते। पात पलाश धरे सभतेते
शृङ्गीऋपि तह नैन मिलाए। ध्याननिष्ठ मुखवद अ
पगनूपुरधुनि सनी सुजवहीं। नैन उघारे मुनिवर तवहीं
मुनि उर जानवन्दना धारी। अरघपादहित लियायो व
गणिकातव मख एह वखाने। हम ऋपिवर नाहिं छुहे सआने
थाफो नीर नचरण पखारो। हमरे तपवनफल मख डार
करणपूर अरु लाडूखाए। शृङ्गीऋपिके मनविगसाए॥८
खाइ जिलेवी लाचीदाण। अहोस्वाद मुनिमुखोवखाने
मिलकर गणिकागायन करें। मुनिवर जाने वेद उच्चरें॥ ८६॥
तुमरे मुखसरोज मकरंदा। वेदधुनी उर जने अनदा ॥
पद क्रम जटाअपूर्वथारी। आप पढाईं जोमुखचारी॥८७॥
याविधिनिरखेतामुखओरा। ज्योंनिशचिते सुचन्दचकोरा ॥
अहो हमारे भाग सुनए। यह मुनि ब्रह्मलोकते अए॥८८॥

(१) करीहुई। (२) पदक्रमजटा वैदिक मन्त्रोंके उच्चारण विशेषों
मे है॥

भारत खंडकी नूतन नारि भई विधवा जिन संगरमाही ॥
होवतहीं यह वात आई कछु नाहिं भई सुनई भवमाहीं॥९१॥
हमरे मनतात सुपूर्वएरतितीनहुलोकसुआप वनाए॥
हमहें अतिवल्लभ तात हिके इहते हम तीनहुलोक दवाए॥
शम औ दम और विवेक पिता वलहीन पिखे वनवास पठाए॥
अवते अघवंत उपायकरें पितभ्रातनमूलसु देहु उठाए॥९२॥

रति रुवाच ॥

सवैया।

सुतआर्यक्यों पुनि पापइसो मति हीनकरेंवहुसंगतुमारे ॥
उर द्वेष वध्यो तिनके अतिहीं इहभांति चहें जगपापकरारे॥
अथवा इह कौनउपाय सुनो धुजमीन तुमे मन माहि विचारे॥
इहभांति सुने रतिवाकजवै तव वोलउठे रतिप्राणपियारे॥९३॥

काम उवाच ॥

दोहा।

भामिनि गूढ सुवीजइक, है पुन कह्यो नजाइ ॥

रति रुवाच ॥

आर्यसुतक्यों नाकहें, मोको तूं प्रगटाइ ॥ ९४ ॥

काम उवाच ॥

दोहा।

रति तूं नारिसुभावते, भीरू अतिडरपाइ ॥
वैपापी दारुणकर्म, तोपे कह्यो नजाइ ॥ ९५ ॥

रति रुवाच ॥

दोहा।

आर्यसुत सोकौन वहु, कैसोकरम कमाइ ॥
विनभाखे थल मीनसम, मेरो चित्त तरफाइ ॥ ९६ ॥

काम उवाच ॥

सवैया।

भामनि नाहिडरें उरमैं हत आशविवेक सुआश ठराई ॥
याकुलमैं निसकालसमाविद्योंजिह नाम सुराक्षसी काई ॥
लेवहिगी अवतार सही उरभीतर नाहिं दया कछु राई ॥
होवतसत्य भविष्यकथा जनकी श्रुति याजग एहु अलाई९७

रति रुवाच ॥

दोहा।

हा धिग हमरे कुलविषे, पिसताशीसुमहान॥
उपजेगी उर कंपहै, चलदलपत्रसमान ॥ ९८ ॥

काम उवाच ॥

दोहा।

भामनि क्यों उर कंपहै, लोककहैं यह वात ॥
जनमु राक्षसी होइगो, निश्चैनाहिं वि रुयत ॥ ९९ ॥

रति रुवाच ॥

दोहा।

नाथ वखानो एहु तुम, जो उपजे पुन सोइ ॥
याजगमैं अवतारले, कामकरेगीकोइ ॥ १०० ॥

---

(१) नष्ट होवे आशा जिसकी (२) ब्रह्मसाक्षात्कार औ क्रूर कर्मके करणेते राक्षसी कहींहै (३) पुरुषोंकी वार्त्ताहै निश्चय नहीं ॥

दोहा।

उपजतही प्रबोधसुत, करे वन्ध सभहान ॥
वन्धनमुक्ति विराजही, परमात्म भगवान ॥ १४१ ॥

सवैया।

सुत आर्य्यजो प्रभको दृढवंधनहें दृढग्रन्थि महादुःखदाई ॥
ताअवला तव संगमते सुतबोधभये वहु वन्ध मिटाई ॥
पति नीतभजो तिनसंगमको अव वेगिमिलो किम वेर लगाई ॥
सुतआर्य्यनीतरमोतिनसोंममचीतप्रसन्नभयोहुलसाई॥१४२॥

राजोवाच ॥

सवैया।

भामनि जो यह वातिभई तव सिद्धमनोरथआज हमारे॥
हैजगआदि सुएक विभू परमात्मजा श्रुतिपुंज उचारे॥
ताहि करे वहुखंडजिनोपुरदेहनमें वहु वन्धन डारे॥
चिदईशदयोमृतकोपदहाअवतेंइवनेजगभीतरमारे॥१४३॥

कवित्त।

ब्रह्मकेजोंभेदकहेंखेदकअनेकविधि,
प्राणअंतप्राश्चित ताहि करवाइये ॥
विद्यासरूप प्राश्चितयों अनूपहोइ,
जीवब्रह्म एकता सु तवी मोक्ष गाइये ॥
कार्यके सिद्धहित शांति औ दमादिजेई,
ताहताह तीरथमें वेगसु पठाइये ॥

(१) मार्गोका नागरूप। (२) ब्रह्माद्वैतसाक्षात्काररूप। (३) मनोधर्मो इत्यादिरूप ॥

काम उवाच ॥

सवैया ।

भामिनियों सुनिये जगमैं इहवाकअहै विधिब्रह्म अलाया ॥
पुंस असंगकहें जिहको तिहनारि अहे जगभीतर माया ॥
नाहिं छुहे तिह संग कवी मनें वल्लभ ताहिंविषे सुत जाया॥
तां उपरंत सुनो गजगामनि नाथंइहे पुनलोक वनाया१०१॥

दोहा ।

कन्या ताते होइगी, विद्यानाम कहाइ ॥
तातमात पुन भ्रातकुल, लए सकल वहुखाइ ॥ १०२

कवि उवाच ॥

दोहा ।

त्रास,कंप रतिको,भयो, वोली अतिभय आहि ॥
भरताके गलसों मिली, आर्य्यसुत परिपाहि ॥ १०३

सवैया ।

रतिसंगमकोसुखआहिजोईमुखस्वांगतिकेंपुनकामदिखाए
तनमाहि मनोजरुमंचभये युगतारक नैननके तरलाए
घनपीनपयोधर नारि मिले शिवके रिपुतो मनमें हरषाए
मणिगुंजत कंकण हाथविषे रतिकंठभुजामनमें विगसाए१

---

(१) असङ्गोह्ययं पुरुषः । इतिश्रुतेः । (२) शंका:—पुरुषके साथ संबन्ध रहित हुई
माया मनको कैसे उत्पन्न करेगी । समाधानः—पुरुषके साथ संबंध रहित मायाका संबन्ध
मनको उत्पन्न करे है दृष्टान्तः—जैसे चुम्बकपाषाणके साथ लोहशिलाकाका संबन्ध
है तौ भी चुम्बककी क्रियाके पीछे क्रिया करे है यह लोकमें प्रसिद्ध है तैसे पु
संबन्ध रहित हुई भी माया इच्छामात्रसें मनको उत्पन्न करे है—यातें (अ
प्रतिबिम्बमाया) है याते मायासें सबवस्तु वन रहे है । (३) मनं। (

ऐसेमतिमान मति पति तौवखानकर,
गएभौनऔरपिखजाहिसुखपाइये ॥ १४४ ॥

सवैया।

मतिसंग विवेक विचारकियो जगभीतरजोजनकोसुखदाई ॥
जिहसों सभजीवकी बन्धमिटै परमात्मसंग सुवेग मिलाई ॥
तपसातटतीरथजोगभजे उपजै सुतबोध बडो जसदाई ॥
कविसिंहगुलाबसु एहकथा प्रथमै यह अंक निरंतरगाई१४५॥

दोहा।

गुलाबसिंह मतिपति मतो, जानमोहभूपाल ॥
दंभकलादिक पठेगो, तीरथहनन विसाल ॥ १४६ ॥

इति श्रीमन्मानसिंहचरणशिक्षितगुलाबसिंहविरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके
प्रथमोऽङ्कः समाप्तः ॥ १ ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक
प्रथमांऽकटिप्पणिका समाप्ता ॥ १ ॥

काम उवाच ॥

सवैया ।

तव संगममोद जने मनमैं, अरुमोहमहा उरमैं उपजाए ॥
इमभाप मनोज प्रमोदवढे रतिको दृढ कंठ सुफेर लगाए ॥
हम जीवत कौन बली जगमें पुन आत्मविद्याजो उपजाए ॥
जगं कौन विवेककोनाउलएरतिभीरुकहेतुमक्योंडरपाए १०५

रति उवाच ॥

दोहा ।

विद्याकन्या राक्षसी, ताउत्पत्ति जोइ ॥
तुमरे वेरी जगतमें, किहविधि चाहै सोइ ॥ १०६ ॥

काम उवाच ॥

सवैया ।

सांदुहिता श्रुतिनारिविषे, खलराय विवेकप्रिये उपजाए ॥
संगप्रबोध शशी पुन भ्रात, सुहंसगते तिहमाहि उपाए ॥
ताउत्पत्तिविषे पतिनी सुशमादिक आपसहाइक आए ॥
ते उपवासकरें तपसाधृत उद्यमतीरथ देव मनाए ॥ १०७ ॥

रति उवाच ॥

दोहा ।

आत्मनाशक विद्या, ता उत्पत्ति जोइ ॥
काहिसराहै दुष्टमति, शंका पापन होइ ॥ १०८ ॥

---

(१) विपरांतरके निस्तरणको उत्पत्करनाहै। (२) अनाहून महाकारान्त-करणवृत्तिरूपाकन्यातान दिया। (३) अनाहूनमहाकारान्तःकरणवृत्तिरूपनैनन्यम्ब-प्रबोधचन्द्रमा भ्राता ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

श्रीगुरुभ्यो नमः ।

अथ द्वितीयोङ्कप्रारंभः ॥ २ ॥

दोहा ।

अमुर विदारे जाहि जग, देवनकियो उधार ॥
तारघुनायक विमल पद, वन्दों वारंवार ॥ १ ॥

सवैया ।

तव दंभको स्वांग भयो अतिसुंदरजाहिपिखेजगशीशनिवाए ॥
करसैननहीं समुझावतहै सभपेखत राजसभा महिआए ॥
मुख एहुकही महा मोहवली सिरहाथधरे जगमाहि पठाए ॥
सुत दंभ अमातन संगविचार विवेक कियो वहु होननपाए२॥

महामोह उवाच ॥

सवैया ।

इह विवेक विचारकियो सुप्रवोध वलीसुतलेहि उपाए ॥
ताहिनिमित्त सुतीरथमे, शम औ दम आप विवेक पठाए ॥
है हमरे कुलनाशनिमत्त इहै जगमाहि विरंचिवनाए ॥
तुम होइ सुचेत उपायकरो जिहते इह नाशनिमत्त मिटाए॥३॥
तिन तीरथमाहि वनारसजो वहु मोक्षनिमित्त विरंचिवनाई ॥
शिवकी नगरी सुतदंभवरो सुकरो तुम जाइके एहुउपाई ॥

(१) विषयोंमें अत्यंत आसक्तिका हेतु जो अहंमम अभिमान है ताका नाम महामोह है ॥

काम उवाच ॥

सवैया ।

रतिजे कुलनाश प्रवृत्तिभये, वहुपापकरें नहिं पापडराए॥
मुख नीत मलीन रहेतिनको, उपजे निजतात सुआतमघाए॥
वलि पावकधूम सुमेघभयो फिर धूमधुजंहन आप खपाए॥
कुलकंटक आहिविवेक सुनोनितपापकरेनहिं रंच लजाए १०९

(अथ नेपथ्ये कलकलाशब्द)

विवेक उवाच ॥

सवैया ।

आहिदुरातमकामकलंक सुवृंधरमातम आप अलाए॥
तेअघवंत सुपापकरें इम भाप अघी हमको सुठराए॥
नाहिलयो मन तातमतो जिम मूढ मनोज सुनो चितलाए॥
तातभयो सुतमोह अधीन सुमारग वेदको दूर भुलाए॥११०॥
कार्य औ अकार्यको गुरु जोन पिखे उरमें गरवाए॥
वेदविरुद्ध सुपंथविषे मनके मदके जब पांउ टिकाए॥
ताहिं त्याग सुवेद कहे मनुस्मृतिमें पुन एहुवताए॥
वीच पुरानन व्यासकहे ऋषि पूर्वले पुन एहु अलाए॥१११॥

दोहा ।

पिता गुरू मत त्यागकर, वडभागी प्रहलाद ॥
मुक्तिपाइ वन्धनतजे, हरिकेसनसुपाद ॥ ११२ ॥

---

(१) अग्नि । (२) मन । (३) श्लोक—गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः । उत्पथप्रतिपन्नस्य परित्यागो विधीयते ॥ अर्थपद—गंगुरु अहंकारादिकसे हेकरके उन्मत्तभयाहूं ममभया है तथा जो कार्याकार्यके अर्थहूं तथा कार्यनिषिद्ध मार्गमें प्रवृत्तहोवे ऐसे गुरुका त्यागकरनेयोग्य अर्थहूं जानताभयाहै तथा कार्यनिषिद्ध मार्गमें प्रवृत्तहोवे ऐसे गुरुका त्यागकरना ॥

वस मोहि बनारस एहुकही

दम्भ

दो

जाहि निवास सुमैंक
मनमथके उत्सवभजें

क

वारवधू भौननिसवस
कामके कलोलनिसों
चाँदिनीसुरात मनमत
नारिनके संगसु अनं
नाइ प्रातकाल मले
धूरत सुवडो सवलोग
दीपत सर्वज्ञ पुन ताप
हव्यवाहहोमहम कदी

दो

योंदिनमें वंचत जगत
महामोह भूपालको,

कवि

दो

धाम बनारस गंगतट,
कोइक आवत देखिक

---

(१) भ[illegible] महात्[illegible] सिद्धि [illegible]
[illegible] प्रसिद्ध [illegible] है [illegible]

कवित्त।

तात जो हमारो सुहंकारके अधीन भयो,
कार्य अकार्य न रंचक विचारियो ॥
जगतको पतिजो परमात्मासु तात निज,
ताहिको सुवाध जगशृंखलमें डारियो ॥
मोहमदमान निसदिन सनमानकर,
छोड़िनो सुदूरबंध दृढ विसतारियो ॥
ऐसो मन तात जोइहतएनदोपकोई,
कन्योहमत्यागनहिं ताहिमतो धारियो ॥ ११३ ॥

सवैया।

इहऔसर कामविलोकनके रतिकेप्रतिएहु सुवाकअलायो ॥
हमरे कुलमें सुप्रधानवडो मति संगिमिल्यो सुविवेक हिआयो॥
गजगामनि आवतहै इतओर चले मृगके पतिज्योंहुलसायो ॥
शिवज्योंतुहिनाचलकीतन्या, मतिसंगमिले इहभांतिसुहायो ॥

दोहा।

रागादिक जिन वसकिये, कीरतिवंत उदार॥
उर अतिकोप्यो मानधन, मनोनिरादर धार ॥ ११५ ॥

सवैया।

तन दूवर एहुविवेक पिखो रतिचित्त कठोरमहादुःखदाई॥
कलेपीमतिमाहि सुयों लसके तुहिनाचलज्यों शशि देतदिखाई,
इहकारणते हम योग्यनहीं इहठौर निवासचले सुपलाई ॥
रतिसंग मनोज सुभागगए, मतिसंग विवेक वरे तिहआई ११६

(१) रागादिरूपकटस्य ॥

दम्भउवाच ॥

सवैया।

कौन उलंघ भगीरथिको इत आवतहै सरितातटमाही ॥
ज्वाल मनोअभिमानहकी जन तीनहु लोक ग्रसे मुखमाही ॥
वाक कहे इहभांति मनो सुदवावतहै सभको जगमाही ॥
बुद्धि वडी दमके उरमैं सभको उपहास करे मनमाही ॥ ९ ॥

कवित्त।

राढा जो प्रसिद्ध देश दक्षणकलेश हर,
तिन हीते आयो यह ऐसे मनआइहै ॥
आर्य्यअहंकार सुहमारो तहां नीतवसे,
समाचार लेहु कछु मोहिको सुनाइहै ॥
ऐसे मन दंभ सुविचार नीके करे तव,
आयो सुहंकार चाल हंससी सुहाइहै ॥
अहोवहुमूरख जगत यह छायो सभ,
ऐसे सुहंकार मुख वैनन अलाइहै ॥ १० ॥
भटपाद मतको नजानत अजानलोक,
नाहि प्रभोकरको मरम पछानई ॥
तोतांतिकगंभीर मत धीरनहीं पारलेहे,
सालेकको ततज्ञान कोई नहीं जानई ॥

(१) मीमांसकभट्टपाद–देहादिकोंसे भिन्न जडचेतनरूप आत्मा मानेहै। (२) पूर्वमीमांसाका एकदेशी प्रभाकर–देहादिकोंसे भिन्न ज्ञानगुण विशिष्ट हुआ आत्मा चेतन मानेहै। (३) कौमारिल शास्त्रके तत्त्वको नहीं जानते। (४) शारिकनामग्रन्थके तत्त्वज्ञान कहिये सिद्धांतको अर्थात् शांतन मुनिके मतमें वासुदेवही प्रथम प्रकृतिरूपही तत्त्व है ताके ज्ञानसे शून्य है ॥

विवेकभूपति रुवाच ॥

दोहा ।

सुनेप्यारी कानतव, कामवडेमदवेन ॥
इमैवखाने पापकृत, दुष्टात्मयहमेन ॥ ११७ ॥

मति रुवाच ॥

दोहा ।

आर्यसुतनिजदोपको, जानतनाहिं सुकोइ ॥
दोपवखाने औरको, मूढ जगतके लोइ ॥ ११८ ॥

राजोवाच ॥

सवैया ।

चितआनंदनीतनिरंजनजो जगनायकजाहिसुआगमगाए ॥
मदकामहंकारपरायणने तिनको जगभीतर बन्धन पाए ॥
अतिदीनदशा तिनकी सुकरीपुनःसुकृतवंतसु आप कहाए ॥
हम ताहि छुडावनमाहि लगे अववंत अहो खल मोहि अलाए॥

मति रुवाच ॥

सवैया ।

सुत आर्य्य जो परमात्मंह सहजानंद मुंदरवेद उचारे ॥
बहुनित्यप्रकाश महारविसों सुत्रभाननमाहि सुजाहि प्रचारे॥
इहभांति सुनोपरमेश्वरमें किहभांति इने तिनवन्धन डारे॥
दुःखसिंधुपरात्मडारदयो किम ताहितजे गुण आपउदारे॥१२०

राजोवाच ॥

सवैया ।

अतिधर्यवंत उदारवडो उगमन्य सदा गुणसिंधु सुगाए ॥
स्वाच्छमदा उरनीतवमे सुमहालक्ष्मी सिर छत्र झुलाए ॥

वेदव्यास वाकपति कापिलकणादमत,
और जो महोदधिको मत कवि भानई ॥
महोवृत्तिना निहारे पुन ब्रह्मकोविचार,
कहा नाम नरपशु सभ ऐसे हमजानई ॥ ११ ॥
एहे जो पेखये महानमान वोझभरे अति,
महापशु बुद्धिकछु अरथकी नाइहै ॥
कटिमैं पीतांवर अडंवतोखूवकरै,
सामवेद धुनि पुन ऊँचे सुर गाइहै ॥
पूछिये जु वात तु रिसात मन क्रोधभये,
फेरफेर मूढ वेदपाठ न सुनाइहै ॥
वेमुख आचार श्रुतिचारको विचारकहा,
जीव काके हेत मूढ वेदन वहाइहै ॥ १२ ॥
औरठौर गयो पुन कौतुक सुनयो पिख,
वोलियो हंकार सुगुलाव पहिचानिये ॥
नामतो सन्यास मागे भिक्षा विलास करें,
यही जतीनाम लोक माहितो वखानिये ॥

---

(१) वेदव्यासका वेदांतमत तथा वाचस्पतिका मत, औ, कपिलकृत, सांख्यशास्त्र का मत तथा कणादकृत (न्यायशास्त्र) का मत तथा महोदधि कहिये शेषप्रणीत भाष्यकामत। (२) पाशुपत शास्त्र संहिता नहीं देखी तो ब्रह्मका विचार सूक्ष्म होनेते अति कठिन है। (३) सर्व मनुष्यरूप पशु है सो शास्त्रमेंभी कहा है:—

श्लोक—आहारनिद्राभयमैथुनानि, सामान्यमेतद् पशुभिर्नराणाम् ॥ ज्ञानं नराणामधिको विशेषो, ज्ञानेन हीनाः पशुभिःसमानाः ॥ इति ॥ इन सर्वमतोंका अर्थ विस्तारभयसे लिखा नहीं (४) शुद्ध वेदपाठी ब्राह्मण। (५) भिक्षामात्रवास्ते यतीपणेको ग्रहण किया हैनहीं मुक्तिके वास्ते ॥

मति धैर्य शील तजे क्षणमें सुनभामिनि नारि न जाहिभ्रमायो॥
अव औरकी वात कहाकहिये निजनारिपरात्म आप भुलायो॥

मति रुवाच ॥

सवैया ।

सुतआर्य्य जो तमहोइ वडोरविकोनहि छादसकै पुनःसोई ॥
तिम आत्म नित्यप्रकाश महा जिनके सम दूसर और न कोई॥
सुखसागर नीत उजागरहै अज्ञान कहो किहभांति सुहोई ॥
अव दूरकरो करुणाकरके इहशंक वडी उरअंतर पोई ॥१२२॥

राजोवाच ॥

अनंगशेखरछन्द ।

विनाविचार सिद्धए प्रसिद्धवारयोपिता,
समान नाममायाविलासिनीवखानिए ॥
मणिसफाटकंयथासुदेवऊजलोमृषा,
सुहावभावकैतथाप्रवंचनासुठानिए ॥
ताहिके सुसंगते असंगताउ देवकी,
स्वरूपसिद्ध नित्यहै मनाक नाहिं हानिए ॥
तथापि गाँढसंगके प्रसंगविक्रिया भई,
छुटीसुधीरता तवै अधीरता सुजानिए ॥ १२३ ॥

मति रुवाच ॥

दोहा ।

कारण कौन सुभाषिए, जाकर करे विकार ॥
पुरुपपुरातनसोंवधू, जाको चरित अपार ॥ १२४ ॥

---

(१) नाम अनिर्वचनीयहै । (२) क्रीडादिविलासोंकेकरनेवाली । (३) मिथ्याहाव-भावकरके असत्यपदार्थोंको सत्यरूपदिखावतीहुयी पुरुषोंको वंचनकरती (ठगती) है । (४) अत्यंत संगसे विकार मानभया ॥

मूंडे तो मुडाए नाम पंडित कहाए कछु,
ज्ञानहूं न पाए करवेदभाष्यठानिये ॥
कीनेहैं व्याकुल विदांतके प्रकरणसभ,
आवतहै हास मुहि यहि सुनि वानिये ॥ १३ ॥
प्रत्यक्षते विरुध अरथ भापत वेदांत सभ,
एकही अखंड ब्रह्म दूसरो नगायोहै ॥
ऐसे जो विदांतशास्त्र मानतप्रमाण मूढ,
बौद्धनके ग्रन्थनमैं प्राध कौन आयोहै ॥
सेवरा सन्यास बौद्ध ग्रन्थ औ विदांत एक,
भिन्नभिन्न नामइक छलके चलायोहै ॥
तिनहूंके संग पुन वोले महापाप चढैं,
ऐसे मुख भाप पांउआगे सुउठायोहै ॥ १४ ॥
एही शैवें पाशुपत आगम सुशैव रति,
रासभसमानतन भसम लगाइहै ॥
पशुहै अदंड लोकमाहिं सुपखंड करें,
इनसों प्रभाप नर नरक सुजाइहै ॥
शैव पाशुपतके निहारे होइ पाप अति,
पेखिये सुनाहि इन ऐसे बुद्धि गाइहै ॥
गुलाब सिंह देखिकै हंकारकी विसाल छवि,
लोगनिके पुंज पुन आगेही पलाइहै ॥ १५ ॥

(१) नहीं मनको मुण्डाया-पण्डित कहाते हैं परन्तु पण्डित नहीं है। (२) प्रत्यक्षादिप्रमा सिद्ध जो अर्थ हैं तिससें विरुद्ध अर्थके कहनेवाले वेदांत शास्त्र यादिप्रमाणरूपकर मानतेहैं तो बोधके ग्रन्थोंमें क्या अपराध है अर्थात् तिनोंकोभी प्रमाणरूप मान्या चाहिये यह तात्पर्य है। (३) शैव प्रधान पाशुपत मत है जिन उपासकोंको तिनका नाम शैव पाशुपत है ॥

राजो वाच ॥

दोहा ।

माया कारण काजको, चाहितनाहिंसुकोइ ॥
नारी जान पिशाचनी, यही सुभाव सुहोइ ॥ १२५ ॥

सवैया ।

मोहतहै कवहूं अवला मदसोंसु विडंवन फेरकरे ॥
कवहूं पुन ताडत है अवला कवहूं हँसके पुन अंकभरे ॥
सुविखादकरे कवहूं कवहूं अतिदीन मनोरिद माहिवरे ॥
द्दगवामकटाक्षनके अवला कहुकौनहकौननचीतहरे ॥१२६॥

दोहा ।

है कछुकारण कौन पति, कहों सुनों अव सोइ ॥
दुराचार इन चित वियो, कर्‌यो विचार सुकोइ॥१२७॥

मायोवाच ॥

सवैया ।

अव जोवन मोहि विलाइगयो पुन देव पुरातनहै जरठायो ॥
अव मोहि विपेरस आहिकहारस वेसुखजोवनमें नरसायो ॥
अव और उपाय वने नकछू मन पूत वने अव राज दिवायो॥
इहमातमतो सुविचारमनेमन पूत तवैनिज तात मिलायो१२८
नवद्वारनके पुर ताहि रचे मन आप सुनो तिनवीच वसाए॥
इकरूपहुतो परमात्मजो वहुभांतिनके पुरमाहि फसाए ॥
सुकरे मनकार्य्य आपजितेपरमात्मके पुनमाहि टराए ॥
सुजपाकुसमंमणिमाहियथाहनश्वेतगुणंगुणलालदिखाए १२९

(१) कार्य। (२) इस प्रकार मनने माताके मतको विचारकर तथा मनरूपपुत्र तात परमेश्वरके साथ अभेद संवन्धवाला होकर ॥

औरठौर गयो पुन पेखिमुच्छकानो अति,
अहो वकध्यान पटऊजल सुहाइहै ॥
गंगनीर धारतट शीतलसिलासवार,
प्रोक्ष प्रोक्ष आप कुश आसन विछाइहै ॥
लए अक्षमाल मुख मंत्रतो विसाल जपें,
अंगुलकेमाहिं कुशमुद्रे सुवनाइहै ॥
एही दंभवंत धनवंतनिके वित्त हरें,
वीच मंत्र न्यासकर अंगुली हलाइहै ॥ १६ ॥

सवैया।

हंकार तवे पुन पांइ उठाइ चल्यो मच्छकाय पिखेजनआना ॥
हे कर माहिं त्रिदंडधरे मख छूत वके मुलदे अभिमाना ॥
द्वैतसुनाहि गहे उरमैं पुन नाहि अद्वैतको रंच पछाना ॥
पंथ उभे इह भ्रष्ट भये भनि आश्रम और पिखे मच्छकाना १७॥
किहको इह आश्रम पावनहै ढिग द्वारन ऊच सुवंस गडाए ॥
सुमनो तिन ऊपर नाचतहैं सित अंवर पुंज हजार तनाए ॥
इतहै कृष्णाजिन यूप शिला इतते चमसा वहुभांति सुहाए ॥
इत मूसल और मऊपलहै इत केसरकुंभ सुचीत वनाए॥१८॥
घृतहोम सुगंध सुधूम वडो तिन श्याम सभोनभमंडलकीनो॥
यह गंगसमीप सुआश्रमहै पिख मोहि सभो श्रम होवत खीनो
ग्रहमध्य वडो धरमात्मको तिनको यह आश्रम आहिनवीनो
सुभलो यह आश्रमपावनहैदिनदोइ सुतीननिवास सुखीनो ॥

(१) रुद्राक्ष माला। (२) द्वैताद्वैत उभै। (३) काले मृगकी त्वचा-यूप थंभा-चमसा

मति रुवाच ॥

दोहा।

आर्य्यसुत यालोकमें, जैसी मात प्रवीन ॥
तांको सुत तैसो भयो, कहो देव कतकीन ॥ १३० ॥

राजोवाच ॥

सवैया।

तवचीतको पूत हंकार वडो नंपिता परमात्मकोजगगायो ॥
अतितोतलवैनगयो ढिगजो हसके परमात्म कंठ लगायो ॥
तव भूलगयो परमात्म आप भवमोहभयो इम आप अलायो॥
इह तात इहै मममात अहै इहखेत इहै सुकलित्र सुहायो १३१॥
यहपुत्र सुमित्र अरात वडो पुन याव सुधा वलें आहि हमारे॥
गज अश्वपशू यह कोर्श अहे पुनएहुसुह्रदसुवन्धु पियारे ॥
चितको फुरणों जिहभांति भयो तिमदेव परात्म आपन धारे॥
अज्ञान मई वहु नींद भई स्वप्ना वहु भांतिन भांति निहारे १३२

मति रुवाच ॥

दोहा।

आर्य्यसुत परमेश्वर, दीरघनींद विकार॥
वोधे जनम किह भांति पुन, होवे मोहि उचार ॥१३३॥

कवि रुवाच ॥

दोहा।

सुनत विवेकमहीपको, लाज भई उरभार ॥
कीन अधोमुख तासमं, धरणीओर निहार ॥ १३४ ॥

(१) मन। (२) पौत्रा। (३) सेना। (४) खजाना। (५) प्रबोध ॥

दोहा।

ऐसे धार हँकार उर, वन्योचहै तिहमाहि ॥
पुरुप निहाऱ्यो एक तिह, रूप सुनीजे ताहि॥ २० ॥

सवैया।

मृंदलांछततां तनु सुंदरहै, पुन भाल विपे घसि चन्दनलाए॥
भुज औ उदरे उर कंठ उरू पुन ओठन चन्दनटीक वनाए॥
दृग जानु कपोल सुपीठविपे चिविकेवहु चन्दनटीक सुहाए॥
कुश चूंडकटे कर काननमैं सुमनो यह दंभइ सोचमकाए२१
सुभले अव याहिसमीप चलों इमधार चले मन सूप घनेरे॥
ढिगजाइ उठाइ भलेकरको मुख एहुकही कल्याण सुतेरे॥
पुन दंभ हूँकार कीयो मुखते इम वारतहे नहि आउ सुनेरे॥
ईंतनेमहि आइगए वटुवालक वामन वाकसुनो तुममेरे॥२२॥
दूरहि ठाढरहो द्विज जू इह आश्रमकी गति तोहि नजानी॥
पादपछालन आप करो करभीतरऊ जल लेहु सुपानी॥
तो इमआश्रम पांउधरो इम कोन वरो वटु एहवखानी ॥
क्रोधभयो सुहंकारवड़ो इहभांति सुनी वटुकी जववानी॥२३॥

हंकार उवाच ॥

सवैया।

हाविधि कौन कुदेशअए जिहदेशन याविध लोक वसैहै ॥
कोविदलोक प्रसिद्ध वडे हमसें जिनदेशन आतिथऐहै ॥

(१) मृत्तिकाके बिंदुकर चिह्नित है शरीर जिसका। (२) शिखा। (३) दम्भका शिष्य। (४) आपणे अनिष्टकरणे विषे तथा परके अनिष्ट करणे विषे प्रवृत्ति करावणेहारा जो अभिज्वलनरूप अंतःकरणकी वृत्ति विशेष है ताका नाम अहंकार है ॥

मति रुवाच ॥

दोहा ।

आर्य्यसुत किहहेतते, गुरुतरलज्जातोहि ॥
नम्रसुकंधर तेभई, भाषो कारण मोहि ॥ १२५ ॥

राजोवाच ॥

दोहा ।

नारिनको बहु ईर्षा, होवत जगतमझार ॥
साऽपराध जन आप पिख, कहों न तोहि उचार ॥ १२६ ॥

मति रुवाच ॥

दोहा ।

रसप्रवृत्तिकं धर्महित, करे कछू पति प्राण ॥
बहुआरे जगयोपिता, करे काजं तिहहान ॥ १२७ ॥

राजोवाच ॥

दोहा ।

मति प्यारी इक औरहै, माननं मेरी नार ॥
उपनिपत सुनामवखानिए, सुंदररूपउदार ॥ १२८ ॥

चौपाई ।

बहुदिनकी बिछुरीहि प्यारी । मोहि असूया दुःख उर भारी ॥
शमदम जो अनुकूलह होई । ताउपनिषत संग मम होई ॥ १२९ ॥
हेमति तूं जगविपे निवारे । एक महूरत मौन सुधारे ॥
जामत स्वम सुखोपनविलाई । मैं प्रबोधसुत लेहु उपाई ॥ १३० ॥

---

(१) [illegible] । (२) [illegible] ।
(३) [illegible] ॥

...द जलं अगों तिनके हित नाग्रहीं पुन...
जल मंडलको हम और सुदेशहि जाइ वसेंहे॥२४॥

कवि रुवाच ॥

दोहा।

...करकी सैनी दंभकर, कीनो ताअस्वास॥
...इह जनावत थिररहो, काहेभये उदास॥ २५॥

सवैया।

...वोलमुखोवटु एहकही गुर याविधिते द्रिज कीनवखाना॥
...यो तव आगम दूरहिते हम ना कुलशीलसुतोहि पछाना॥
...नि यह वात हंकार वली मुखभाषत है उरमें खुनसाना॥
...मरो कुल शील परीक्षनकैअवलायकमूढ सुतोहि प्रमाना २६

दोहा।

सुन मूर्ख अवतैं कहों, गौड प्रसिद्ध सुदेश॥
राढापुरी प्रसिद्धहै, पेखत हरे कलेश॥ २७॥

कवित्त।

भूरश्रेष्ठनाम पुन ताहिमै प्रसिद्धधाम,
ताहिपति तात मम लोकमैं वखानेंहे॥
ताहिके जुपूतहैं सुपूतऔ कुलीन वडे,
देशनप्रसिद्ध लोकलोकमाहि जानेंहे॥
तिनमे विवेक विनय धैर्य अचार शील,
प्रगट उदार मम कोविद प्रभानेंहे॥

(१) धीरज॥

सोई हमआए विधिलोककिधोनएभये,
भयोसु अचंभ जनमोहि नपछानेहै ॥ २८ ॥

दोहा।

सुनत वात पुन दंभयह, बटुकी ओर निहार ॥
सैननहीं समुझाइयो, देहु पाद हितवार ॥ २९ ॥

सवैया।

ताम्रघटी वटुले करमें पुन उज्जलवारि सुपूर लियायो ॥
ताम्रघटी करले भगवंत करो पदक्षालन एहुअलायो ॥
हंकार कह्यो हम रोंवकरें, जगकाहूंको नाहिवनें सुदुखायो ॥
धोइकिपांउ सुआश्रममें वरनेहिततािह सुपांउ उठायो॥३०॥
दंभे तवे पुन दंतचवाइ चढ़ाइ- भ्रुंए मुख एहु अलाए ॥
दूरहि पांइ गडायरहो द्विजमूढकहाढिग आवत धाए ॥
तेतन स्वेतकी विंदुसुनो पसरें इतते उत वायुचलाए ॥
ब्रह्मण्य अपूर्व एहु पिखी सुहंकार कह्यो मनमें खुनसाए॥ ३१॥

दोहा।

वहुर वटुमुख वोलियो, ब्रह्मण्यइ सोही होहि ॥
उत्तम द्विजयालोकमें, कवकव पेखे तोहि ॥ ३२ ॥

सवैया।

भवभारतखंड महीप जिते पदपंकज नाहि छुहें डरपाए ॥
पदकंजसिंहासन भूतलकेढिगआनसभेनिजमोल झुकाए ॥

(१) दम्भने दन्तोंको दबाय भूको चढ़ाकर बटु बालकके प्रति देखा तब बटुने अहंकारके प्रति कहा। (२) दम्भके चरणकमलको ॥

चारवाक उवाच ॥

सोरठा ।

धूरत कीन प्रलाप, आगमनाम सुताधरे ॥
आशामोदक थाप, मूर्ख तृप्तसुहोवई ॥ ६६ ॥

सवैया ।

दृग दीरघ अंजनशाम खिरंजन नील सरोरुह हैविगसाए ॥
नवनागऱ्यानवनाग कला अलिकै अलिसीसुकपोलसुहाए॥
कह ताहि अलंगनसे जनमें कह पावक पंच सुदेहतपाए ॥
कह विंजन भीष अहार कहां उपवासनकै सठ देह सुकाए६७॥

शिष्य उवाच ॥

चौपाई ।

हे गुरुग्रंथकार हैं जेते । ऐसे वचन वखाने तेते ॥
दुःखविमिश्रत सुख संसारा । ताते ताको करोप्रहारा ॥ ६८ ॥

कवि रुवाच ॥

दोहा ।

सुनत शिष्यकी वातको, हसे सुवालक जान ॥
चारवाक पुन युक्तिसों, आगे करे वखान ॥ ६९ ॥

चारवाक उवाच ॥

सवैया ।

दुःखसंग मिले जगके सुख जेत्रहि दूरतजो इहभांति वखाने ॥
ते निरबुद्धि महापशु हैं हम जीवन के परतारक जाने ॥
सितेतंदुल जे, तुखसंग मिले तिह नाहि तजे जन जें सुरज्ञाने ॥
इहभांति लोकायत वाकसुने महामोहवली मनमें विगसाने७०

(१) वञ्चक । (२) श्वेत । (३) देवज्ञानी ॥

मुकटामणिकी सुमेरीचिनके पद वारजआरती दीपजगाए॥
इनके ढिगजाइ निशंक सुनो मतिभूलगई द्विजतूं खुनसाए२३॥

दोहा।

सुन हंकार सुमनविषे, कीनो इहै विचार॥
मनो सुयाही देशमें, दंभ लयो अवतार॥ २४॥
भवतु तथा इह आसने, मैं अव करों निवास॥
उरूनिवावेताहिने, आसनवैठनआस॥ २५॥
मैवं मैवं वोलवटु, ऊचे कीन प्रकाश॥
आराधपाद आसनइहै, और नकरे निवास॥२६॥

सवैया।

तव वोल हंकारं सुएहुकही मनभीतरकोप भयो अतिगाढा॥
दक्षिणदेश प्रसिद्ध वडो तिह भीतर शुद्धपुरी इक राढा॥
सुनहोतिनमाहि प्रसिद्धवध्योगुरुके कुलवासकऱ्योअतिपाढा
हमजो नाहिं आसन लायकहैं कहु तैंगुरु कौन ब्रह्मंडते काढा२७
सुन मूर्ख कान भले धरियो इक औरप्रसिद्ध कहों तव वाता॥
द्विजकोविद लोकप्रसिद्धवडेसुवरीतिनकी दुहितौविष्याता॥
कुलउज्जलजानि मरालनकी,तिनके सम नाहिं अहे ममयाता
तिसते हम लोकनमांहि वडे हमरे सम नाहिं अहे मम ताता२८
मम सालकमित्र सुमातुलकी दुहिता इक और भलीजगगाई॥
तिनकेव्यभिचारकीझूठकथा शठलोकननेजगमांहि अलाई॥
तिनके निजमाहिसंवंधपिखे मति ताहिसमे अतिमे खुनसाई॥
निज नारि मनोगत जांपिणमें सुमूढवटू वर नाहि टिकाई २९.

(१) गमिकार्क (२) गुरु। (३) कन्या। (४) स्यालक (स्याला)॥

महामोह उवाच स्वपत्नी प्रति।

सवैया।

मानिनि काननमाहि सुनो यह वाक प्रमाण महासुखदाई।
माहि निंदाघमनो वरषा तिमकाननको सुख शीतलताई॥
सानंद ताहि विलोकनके नृपमोह वली इह वात अलाई॥
आहि लोकायतसज्जनमें इन वाकनके उरमें हरपाई ॥७१॥

दोहा।

तिह औसर आयो तवै, चारवाक प्रधान॥
पेखि समीप सुजाइकै, कीनो एहु वखान ॥ ७२ ॥

चारवाक उवाच॥

चौपाई।

यजय महाराजजगकारण। तुम त्रिभुवनके हो प्रतिपारण॥
ारवाकपद करे प्रणाम। सेवक सदा पछानो नाम ॥७३॥

महामोह उवाच।

चौपाई।

ारवाक सुखसों तुम आए। वहुत कालके दरसन पाए॥
तयुग त्रेता भये वितीत। तुमरी सारन पाई मीत ॥ ७४ ॥
ापर अंतभई कछु सारे। कीटभदेस वसतहैं प्यारे॥
ो ईहा समीप हमारे। समाचार कछु करो उचारे ॥७५॥

(१) ग्रीष्मऋतुमें। (२) पृथ्वी अप् तेज वायु इन चारोंको जो माने [illegible]
[illegible]काहै॥

सुनिके यह बात सुदंभ वली मनभीतरसों अतिसे खुनसाने ॥
द्विज तूं निजऊजलता अपनीजगभीतरयाविधिमोहिवखाने॥
सुन मोहि महात्मलोकनमें द्विजरायसु तोहि न रंच पछाने ॥
कछु आहि अपूर्व उजलता ममभीतर सो चतुरानन जाने॥४०॥
हम एकसमेविधलोक गए मुनि मो पिख आसनते सुउठाये ॥
इहठौर वसो मुनिवृंद कहें बहु आसन नाहमेरे मनभाए ॥
विधि आप सुगंदकरी मुखते पुन गोवरसोंनिजजानुलिपाए॥
करजोर भलीविधि आदरकै तिनऊपर मोहिविरंचि वैठाये ४१

दोहा।

वहुर हंकार सुवोलिया, दांभिक ब्राह्मणजान ॥
कह विरंच पुन नर कहां, कीनो झूठवखान ॥ ४२ ॥
अथवा यह द्विजदंभहै, ताहीकीन उचार ॥
ऐसे मने विचारकर, भयो क्रोध हंकार ॥ ४३ ॥

सवैया।

कौन सुरेश्वरको विधिहै, ऋपिकौन सुनो किहते उपजाए॥
मैतपको फल जानत नासुन वामन तूं मनमें गरवाए ॥
कोटिसुरेश्वर विरंचिमुनीपद पंकज मोहि परे डरपाए ॥
रिपिकी उत्पत्तिकी भूमिकही सुपुराननमाहि सुनो मनलाए४४

(१) शपथकरी (२) इंद्र अहिल्यागामिहोनेते कछु नहीं तथा ब्रह्मा स्वकन्यागामी होनेते सोभि कछु नहीं (३) यद्यपि पुराणोंमें ऋषियोंकी जन्मभूमि उक्तरीतिसे कही है। तथापि अहंकारको आसुरी संपतमें होनेकर गर्वसें तथा अपनी सामर्थ्यके जनावने अर्थ सर्व ऋषियोंको नीचखोयोंसे जन्मरूप हेतुकर निकृष्टता (न्यूनता) सूचन करीहै ताको सुनके आस्तिकपुरुषने कुतर्क नहींकरना काहेतें, जैसें प्रपंचकी उत्पत्तिसेंलेकर प्रलयपर्यंत इंद्रादि देवता परमेश्वरने संसारमर्यादार्थ स्थापन कऱ्येहैं तैसें व्यास वसिष्ठादि महान्ऋषिभी-

चारवाक उवाच ।

चौपाई ।

समाचार सुनिए सभदेव । प्रभुकोउनिखिल वतावो भेव ॥
पश्चिम देश वसे सुखधाम । सोष्टांग कलि कीन प्रणाम ॥ ७६॥

महामोह उवाच ।

चौपाई ।

चारवाक मम करो वखान । सवविधि है कलिको कल्यान ॥
मम प्रतापमें अति अनुरागी । कलियुग है जगमें वड़भागी ७७॥

चारवाक उवाच ।

चौपाई ।

तव प्रसाद सवविध कल्यान । तेजवंत जैसे भगवान ॥
कीनेकाज करन नाहिं रहे । तव पदमूल दरसको चहे ॥ ७८॥
तुमरे वाक सु सिरपर धारे । दुष्टनके तिनमूल उखारे ॥
तुम प्रसाद मुदित अति भयो । दरसन सुंदर अतिहरषयो ॥७९॥

दोहा ।

धन्य कलि तव दासहै, करे तुमारे काज ॥
तव पद पंकज वंदना, करे जगतके राज ॥ ८० ॥

महामोह उवाच ।

दोहा ।

चारवाक अतिमित्र मम, मोको करो उचार ॥
कौन कौन कार्यकरे, कलियुग जगतमझार ॥ ८१ ॥

(१) दोपाद । दोजानु । दोहस्त । हृदय । शिर ॥

ऋषिशृंग मृगी कुशकौशिकऔगजनीहस्तामलजू उपजाए॥
वारवधू सुवसिष्ट जए दुहिता पुन झीवरव्यास उपाए ॥
शशिनारिविषे रिषिगोतमजे पुन मांडवमें डकिते निकसाए॥
तन्या सुचंडाल पराशर जूंरिषिऔर मतंग मतंग निजाए ४८॥
तब दंभ विलोक अनंद भयो, यह आर्य मोहि पितामहआए॥
नाम हंकार कहें जिनको, इन पेखनते मनमे विगसाए ॥
आर्य लोभकोमें सुतहों, मम दंभकहें तब लागतपाए ॥
हंकारधरियो सिर हाथ तबे, सुतदीरघआयुबडेसुखपाए॥४६॥

सवैया ।

द्वापरअंत सुमोहि पिखेतब बालहुते तब अंग मलाने ॥
काल विनीत भयो बहुतो सुन याजगमें हम हैं मुरझाने ॥
नैनन मंद मुडीठ भई इहिकारणते मुत नाहिं पछाने ॥
आज अनंद भयो पिखते मम अंगनमो तुम हो तिलकाने ४७॥

[illegible]

[illegible] उवाच ।

सवैया ।

[illegible] ॥
दनके [illegible] तजि [illegible] [illegible] [illegible] ॥
तान [illegible]की कौन कथा [illegible] [illegible] ॥
ता कौन्ता [illegible] [illegible] प्रभुके प्रगट भये [illegible] ॥ ८२ ॥
जो पनवंत [illegible] महानत [illegible] [illegible] ॥
दिगि[illegible] औ पुनयाज्ञिकनि यह [illegible] [illegible] ॥
दिशि दक्षिण पर्व बद्रवयी तनपालनकोहि है [illegible] ॥
मम औ इमकी तह कौनकथा निह [illegible] ॥ ८३ ॥
अवकाज संपूर्ण सिद्धभये, सुविवेकहिकी जड [illegible] ॥

चौपाई ।

अग्निहोत्र पुन वेद विसाला । औरत्रिदंड [illegible] [illegible] ॥
वल्मतिहीनजीवकाकारण । धरे बृहस्पतिकीन उचारण ॥ ८४ ॥
जीवनहित जन वेदविचारे । ताते कारज भये हमारे ॥
कुरुक्षेत्रादि तीरथके माही । प्रबोध उदे स्वमेहुं नाही ॥ ८५ ॥

महामोह उवाच ॥

चौपाई ।

चारवाक कलिमहा प्रवीन । मम हित भुजबल धरे नवीन ।
तासुजदंडकाज मम सरे । तीरथवडे व्यर्थ तिनकरे ॥ ८६
अब मोको निह चिंताभई । तीरथबोध संक उर गई
अहमहि नारि सुतनके संगा । कहाहोइ तह बोधप्रसंगा ॥ ८७

(१) परस्त्रीगमन मद्यपानादिरूप अविहित चेष्टामें नर मानहै । (२) मु[illegible]
([illegible]) मन पाप । पाणिरूप ॥

तव आहि कुमार सुजूठ वडो कहु आनंदसों जग भीतर सोई ॥
तव दम्भ कह्यो इह ठौर वसें विन ताहि नमें जग जीवन होई ॥
तव मात पिता तृष्णा पुन लोभ कहो सुखसों जगभीतर दोई॥
पुन दम्भ कह्यो महामोहकी आयसु पाइ वसें इह ठौर सुओई४८
आपकहो किहकारणते इह ठौर प्रसाद कियो तुम आए ॥
हंकार कह्यो सुतमोह महीपको गोप संदेश सुहै हम ल्याए ॥
चाहत ताहि विवेक हते निज कान सुने सभ लोक अलाए ॥
ता विरतांत सुनावनके हित आवन मोहि भयो समुझाए॥४९॥
तव दम्भ कह्यो सुखसंग अए तव पेखनते मम देह सिरानी ॥
मोह महीप सुआइ इहाँ सुरलोकहिते जन एहु वखानी ॥
मोह महीप शिरोमणि जूं शिवकी नगरी सुठई रजधानी ॥
सभलोक कहें मुखपंकजमें मम आप सुनी यह वात सुकानी५०
हंकार कह्यो किहकारणतें वहु लोकपती इह ठौर वसाए ॥
दम्भ कह्यो इहि कारण है सुविवेक कहूं जग होन न पाए ॥
वोध उदे यह भूमि वनारस वेद पुराण इहै सुखगाए ॥
कुलनाशकवोध निवारणको इह ठौर निवाससुमोहिठहराए५१
हंकार डरे सुनि वात इहै शिवके पुर वोध सुकोन मिटाए ॥
तिन ठौर वसें सव जीव जितेसुखसों शिव ताहिके वन्धछुड़ाए

(१) तथाचाथर्वणश्रुतिः—मुमूर्षोर्दक्षिणे कर्णे यस्य कस्यापि वा स्वयम् ॥ उपदेक्ष्यसि तं मंत्रं स मुक्तो भविता शिव। (२) तच्च ज्ञानं भवेत्पुंसां सम्यक्काशीनिषेवणात् ॥ अर्थ यहः—श्रीरामचन्द्रजी कहतेहैंः—हे शिव जिसकिसी मरणइच्छु पुरुषके कर्णमें स्वयं (आपही) तिस मंत्र (तारक) का उपदेश करोगे सो पुरुष तारकमंत्रोपदेशजन्य ज्ञानद्वारा मुक्त होवैगा ॥ १ ॥ ब्रह्मात्मैक्यलक्षण जो ज्ञान सो पुरुषोंको सम्यक् काशीके सेवनसे होवैगा ॥ २ ॥

चारवाक उवाच ॥

दोहा।

तव पदपंकजको लिखी, कलियुग पातीआप ॥
याको आप बचाइये, राजन रविप्रताप ॥ ८८ ॥

चौपाई।

याविधिसुन्योभूपति जबही। पातीलगो बचावन तबही ॥
वाचक कहे सुनो जगभूपा। कलियुगपाती लिखी अनूपा ८९॥

कलियुग उवाच ॥

दोहा।

तव वसकीनो निखलजग, सुरनरमुनीमहान ॥
कलियुग पद वन्दनकरे, महामोह भगवान ॥ ९० ॥
समाचार सभदेशको, सुनो जगतसिरताज ॥
तव प्रताप तव दासजग, एहु करे सभकाज ॥ ९१ ॥

छप्पयछन्द ॥

जग तजेनमायामोहनाम अतीत कहावैं ॥
घरमैं लेहिकुंसीद भीष पुन मागन जावैं ॥
रैनकरें रसभोग दिने तन भसमलगावैं ॥
आपकरें सभपाप और को धर्म बतावैं ॥
इहभांतिअतीतसुमै करे नखशिपलौअभिमानअति-
उर निसवासर दमडाचहें कबहूंन होवै रामरति ॥ ९२ ॥
हरिकोपंथ सुदूर पंथ, बहु आपचलावैं ॥
रही फकीरी दूर मांगपुर पेटअघावैं ॥

(१) ध्यान ॥

कह इकंत वनवास संगवहु दुंदेभवावैं ॥
सवैं निरंतर रातिदिने पुन ध्यानलगावैं ॥
पुनधनमद मसीमलानमुख भूपसौध पुरपौलैंपर ॥
धनलिपसों व्याकुलमहा शरमापतिसभरहेपर ॥ ९३ ॥
नीतिनिपुण नहिभूपन्याय मन उक्तविचारें ॥
निजप्रजापर दंडकाज भवभीतर सारें ॥
राजधर्मकी स्मृतिभूपननैन निहारें ॥
पौंनाशक्त निरंतरधर्म न चीत सुधारें ॥
जग प्रावंडवाक पुराणविन, वैठन्यायभूपतिकरें ॥
राजाधिराजमहामोह प्रभुभद्र सदापश्रमधरें ॥ ९४ ॥
भयो उपद्रव एक सुनो नीके मनलाई ॥
वहुनाम नारायणमांहि प्रतीत सुजनकोआई ॥
कहुंकहुं मनलाइ महाजन प्रेमलगाई ॥
प्रातिभजें हरिनाम नैनते नीद मिटाई ॥
यह हरिभक्ति सुवीज प्रभुजनखोटे उरपरधरें ॥
यहभूपआवाचनकहिसकौंतवमूलयुतर्क्तिनकरें ॥९५॥
चारवाकसभ और वातप्रभु सुखो वखाने ॥
महाराज नहिजूठगहैं उरसत्य पछाने ॥
एक पापिनी नारि भई वहु मंत्र सुजाने ॥
यह नाम नारायण दुष्ट ताहिके संग मिलाने ॥

(१) दुंदर्भिवाजा। (२) दरवारी। (३) देहली। (४) मयान।
(५) पुराण कहिये पुरातन तथा न्यायके वेत्ता सो पण्डितजन कहिये सर्वोंहैं तिनों
का राजे बैठकर न्यायकरतेहैं यह भावहै। (६) नाम॥

जिनकेकर पाद मनो वस है, तपकीरतिसोंजगहै उजियारा॥
वहुतीरथको फलपावतहै, यह भारत और पुरान उचारा॥५३॥

दोहा।

वेत्रपाणि आए तवै, कंचुक पाग अनूप॥
नागरजन आए सुनो, महामोह जगभूप॥ ५४॥

सवैया।

चन्दनकें छिणकावकरोमणि फाटक हेम सुवेद वनावो॥
जलयंत्र सभै ग्रहखोलिदिजे तिनभीतर कुंकुमगंध मिलावो॥
सभ द्वारन वन्धनवारकरो गजमोतिनहारलडी लटकावो॥
शक्र सरासन चित्रधुजा सभसौधनकेसिरमाहि झुलावो॥५५॥

कवित्त।

फेर दंभकह्यो महाराज हैसमीप आए,
चलिये अगारी सनमान अति कीजिए॥
कह्यो हे हंकार तुम भलोही उचारकियो,
हूंजीए तयार सुउपायनकोदीजिए॥
जाइके उपायन सुपायनके माहि धरी,
जोरकर कह्यो यों वनारस पिखीजिए॥
आए महामोह भूप पुरमें प्रवेशकियो,
विविध विभूति प्रवारसो सुहीजिए॥ ५६॥

—यह है:—कोशीमें मरेहुए पुरुषको भैरवीयाननासें पापका फल थोडेकालमें भोगाया जावैहै औ काशीसें बाहरमरे पुरुषोंयमयाननासें पापका फल चिरकालमें भोगाया जावैहै यह विशेषता है औ (नाविमुक्तेमृत:) इस श्लोकमें (ममानुग्रहमासाद्य) इस पदकरभी ज्ञानप्रदान रूपानुग्रहका ग्रहण है, यातें (ज्ञानादेवतुकैवल्यम्) इत्यादिश्रुतियोंसैंभी विरोध होवै नहीं इति। (१) चोला। (२) भेट॥

प्रभुअपराधनीतें डरें महायोगिनी प्रवलअति ॥
जगचारवाककें वचन सुनि, करो उपाय सु यथामति९६

महामोह उवाच॥

छप्पयछन्द ।

अव कलिकी मतिवौरानी यों हम जानिओ॥
लघु नाम नारायणमात्र जिन डरमानिओ ॥
इह राजसूयकोकरणो याजग भानिओ॥
अश्वमेध मख मौलकऱ्यो जगहानिओ॥
इह ब्रह्महत्या मातवध परपतिनी गुरुदाररति ॥
अवकरैंनिडरजगमांहिजनडरनाम नारायणभयोकत

कुबुद्धिमंत्रि रुवाच ॥

छप्पय ।

नाम नारायण महादुष्ट भूपति जगगायो ॥
अजामेल इकवार लयो तिन बंध मिटायो ॥
गनिकातें पददासीतां मनतें मतलायो॥
नामदुष्ट तिह मिल्यो सुतिह वैकुंठ पठायो ॥
सुगजपति व्याकुल वारइक नाम नारायण लयो जव॥
राजाधिराज महामोह प्रभुताहि छडायो विष्णुतव॥९८॥

महामोह उवाच ॥

नाम कुबुद्धि तेरो वडो सुबुद्धि पछाने ॥
जननी नाम कुबुद्धि धऱ्यो मृतते डरमाने ॥
तेयह निखल सुवचनमोहि प्रति सत्यवखाने ॥
नाम नारायण नीच चहे जगमेरोहाने ॥

(१) गाली मदानहै ॥

महामोह भूपसु अनू
अहोजडबुद्धि सभल
लोक परलोकमाहि
देहते विभिन्न मूढ
आकाश तरुफूल
करें कहो नभफ
भयेखोटे पंडित
बोलसुकपोल
जोई जग नाहि
भयेहै वचाल
चारवाकनके
भये मूढलोग
अहो तत्व स
काटे तनशि
तनते न्यारे
तवी तनु
लोगनिके
शीतजल
नाक मु
मनमे
आपन
नाहि

अवताहि विनासनहेत कछु होइ उपाय सुप्रगटकरि ॥
कुत्संत विपारप्रभुनिखलजन पठोभजें कहनाम हरि ९
धनी धर्म धन दान न रंचक मनमैं आने ॥
निरधन भजे न नाम दानहित उद्यम ठाने ॥
धार फकीरीभेस मूढ़ कृतार्थ माने ॥
विनुसंतोप श्वानवृत्ति आप उत्तमकर जाने ॥
इह तरुणअवस्थामाहि जनतजे विपे सुउपरति अति
पुनि उभैभ्रष्ट जरठापने धनसुतदारा विपेरति ॥१००

कवि रुवाच ॥

दोहा ।

याअवसर इकआइयो, पत्रहस्त नरआन ॥
महामोहभूपालको, जयजयकीन वखान ॥ १०१ ॥
उत्तर दिशाते आइयो, अनाचार प्रतिहार ॥
यह प्रभुपत्रपठाइयो, लीजे आपविचार ॥ १०२ ॥
सुनकर पत्र सुपठनहित, प्रेर्न्योताहि सुआन ॥
वहुपातीपठनलगो, सुनो प्रभु देकान ॥ १०३ ॥

अनाचार उवाच ॥

छप्पय छन्द ।

उत्तरके सभ लोक करे, मैथिलापरायण ॥
समुझे ईशनतत्ववर्क, मुखसैल नारायण ॥
नारिधर्मतंदीनभई वहुधा गिरडाइण ॥
कहांधरमकीकथारसें, व्यभिचार रसाइण ॥

(१) सेय । (२) अनाचारभूपका दूत ॥

नारि धन भोग पुन पापकोविभाग यह,
आपनो परायो वलहीन सुख गाइ है ॥ ५९ ॥
आतमा शरीर यह धीर चारवाक कहे,
आगम प्रमाण एकताहिको सुलेखिये ॥
भूमि जल तेज वायु तत्त्वसो वताइदए,
जाहि मे प्रमाणसु प्रत्यक्ष एकपेखिये ॥
नारिनको भोग और द्रव्यको संयोग जोई,
यही पुरुषोर्थ न और कछू देखिये ॥
चेतन सुभूत होई नाहि परलोक कोई,
मोक्षविनमृत और दूसरो नपेखिये ॥ ६० ॥

कवित्त।

यही मनधार सुख वुद्धनेउचारकीयो,
उत्तमसिद्धांत चारवाकको पढायोहै॥
चारवाक शिष्यनपर शिष्यन पढाइ सभ,
यही सुसिद्धांत लोकभीतर चलायो है ॥
ऐसे सुन चारवाक चारवाकशिष्यलिये,
पेखत समाज राजसभामाहि आयो है ॥
शिष्यको वुलाय समुझाय वात एहुकही,
दंडनीति विद्या और कछु गायोहै ॥ ६१ ॥

(१) पुरुषार्थहीन कहते हैं। (२) अर्थकामौ पुरुषार्थौ न धर्मो नास्तिमोक्षः। अर्थ यह है—धन तथा काम दोनोंहि पुरुषार्थ है चारवाक के मतमें न धर्म है न मोक्ष है। (३) देहनाशही मोक्ष है। (४) धर्मशिक्षा दियेहै॥

प्रभइत उत्तरदेशते, अनाचार वन्दनकरें ॥
यम अचौरता विनाप्रभ, भद्र सदामनमें धरें॥१०४॥

चारवाक उवाच ॥

चौपाई।

और सुएक वेनती अहे। चारवाक संकत नहिकहे ॥
तुम भवपतिसभकेसिरदारा। तुमरेरचे निखल संसारा॥१०५॥

महामोह उवाच ॥

कौनवेनती नहींसंकावो। चारवाक तुम प्रगट सुनावो॥
तुम मेरे अतिसै हितकारी। तुमको कहाभयो डर भारी १०६

चारवाक उवाच ॥

चौपाई।

विष्णुभक्ति नाम इकहेये। महाप्रभाव योगिनी पैये ॥
कलियुगविरणप्रचारसुकीनी। तदपि अहे वलबुद्धि प्रबीनी १०७
ताऽनुग्रह नर वंस उदारे। हमसेंकीटनासकेनिहारे ॥
देव सदा रहीयो सवधाना। विष्णुभक्तिहै येवलवाना॥१०८
एकवार जहँ पाद टिकावे। मरे न मूलन वहुरपलावे ॥
ताहि विराग तहां सुविवेका। सनेसने दिढवाँधे टेका॥१०९॥

कवि रुवाच ॥

महामोह यह सुनियो जवही। अतिभय भयो सुमनमें तवही ॥
मनहींमें यह गटीसुहोई। महाप्रभाव योगिनी सोई ११०॥

(१) तिसविष्णुभक्तिकर अनुग्रीतहै वंस निसका ऐसें उदारपुरुषको हमारेसेकीट देखिनहींसके तौ साक्षात्विष्णुभक्तिकेभक्तको देखनातौ दूरिहै यह भावहै ॥

शिष्य उवाच ।

दोहा ।

वेदत्रयी गुरुईशकृत, विद्या कहें उदार ॥
वेदनसों कर्‍यो जजन, पाए स्वरग अपार ॥ ६२ ॥

चारवाक उवाच ।

सवैया ।

धूरतको परलाप सुनो यह वेदत्रयीजगमाहि वखानी ।
याचेक यग सुद्रव्य विनाशक ए स्वरलोक जिवावत प्रानी
तौ बहु दाह देहे द्रुमजे फल भूरलहैं बहुरीति समानी
हे नकछू सुकपोलकही धनवंचनके हित एह कहानी ॥ ६३
कृतश्राद्ध ईहा मृतजीवनको पुनजो परलोकविषे तृताये
जलगंगदए तवही जगमें कुरुजांगलखेतनको विगसाए
मृतंदीपशिषा बहुतेलदीये विनपावक सोम्रहमैनिकसा
कृतविंयो तनकै जगलोगठगेमुखएहुकहे विधिवेदवताए

शिष्य उवाच ॥

सवैया ।

गुरुखान सुपान हिम्राणप्रिया सुखसो पुरुपार्थ आपअ
इहतो पुन तीरथकार जिते किहकारण भोगनते डर
जग सूखतजे वनजाइ वसे, तप दीरवसो निजदेह
जगभोगनत्याग सुयोगभजे सुखेहत ईहविधिआगम

(१) यवकका अनर्थवचनप्रपंच तीनो हैं । (२) ... (३) निर्दान । (४) ... पुरोहितादि—...नि यजमान । ... करै । (५) अन्धकार ॥

दोहा।

सदा द्वेष हमसों करे, मारी मरेन सोइ॥
सनेसने हमको हने, महापापिनी जोइ॥ १११॥

दोहा।

महामोह यों मन डरचो, प्रगट कहे कछु और॥
गुलाबसिंह योंहीभने, मान तजे सिरमौर॥ ११२॥

महा मोह उवाच॥

कवित्त।

कहां भई संक निसंक चारवाककहो
कामक्रोधआदिवीर ताहिको निवारहें॥
कामके भयेविकार भक्तिको विचार कहां
होइगीनउदेकहूं वेदयों उचारहें॥
वैरीहोइ छोटोतौ मोटोकर जाने बुद्धिजामत
बबूलकोसुमूलते उपारहें॥
जीवनकेहेत बलबुद्धिके निकेतजेई
भूपति सचेतसु उपाइको विचारहें॥११३॥

दोहा।

लघुअरिअवसर पाइक, दुःखदाइक अवनीस॥
अहिकंटक पगमे गडे, पीडादे नखसीस॥ ११४॥

(१) सर्पकाकांटा॥

कवि रुवाच ॥

चौपाई।

महामोह तव ऊच पुकारा। हैरेको मम भवन द्वारा ॥
द्वारपाल इतने चलि आया। आज्ञाकरो देव जगराया॥११५॥

महामोह उवाच ॥

चौपाई।

काम क्रोध लोभ मद मतसर। सूर नही जिनके को समसर ॥
तिनको आयसु यों ममदीजे। विष्णुभक्तिको हिंसनकीजे११६॥
द्वारपाल तव शीश निवाए। ज्योंप्रभुकहो करोतिमजाए ॥
इमकहि द्वारपाल जवगयो। पत्रहस्त नरआवत भयो॥११७॥

पत्रीहार उवाच ॥

चौपाई।

उर्तकल देशहिते हम आए। प्रभुपदपंकजपास पठाए ॥
तहपुरुषोत्तमको अस्थाना। सागरतट जँहहै मदमाना११८॥
यहहै वनारस जह जगराया। जाग्नेकुल वहु भांति सुहाया ॥
कीन प्रवेशन लाइ सवेरा। दूरहिते तिन भूपति हेरा ११९॥
यह भूपति कछु मंत्र विचारे। चारवाकसो वैठ किनारे ॥
चलों समीप सुपत्र दिखाऊ। कारज वेगनवेर लगाऊ॥१२०॥
गयो समीप सुपत्र दिखायो। जयजय शव्द सुमुखो अलायो॥
मदमानपद चंद चकोरे। पत्रलिख्यो पढियो प्रभुमोरे१२१
सुनिकर मोहभयोनिजलीनों। है कछु दुःकर भयो मलीना ॥
चारवाकप्रति एहु अलाई। अव नहिवने सुवेर लगाई१२२॥

---

(१) उडीआदेश। (२) जगन्नाथस्वामी। (३) अपनेस्वरूपमेमूर्छासा होयगया ॥

युवती मुख चंद निहारतहीं नरचित्तचकोर महा हरषाए ॥
दृगकंज फिराइ पिखे युवती कहितां गतिजो नरता खुनसाए॥

दोहा ।

इम भापत दोनों चली, आवत मोह निहार ॥
देवी मिथ्यादृष्टियहि, ऐसे कीन उचार ॥ १७४ ॥

सवैया ।

कदलीसमजंघ विरंचि रची, पुनफूलनमाल सुकंठसुहाए ॥
कर चंचलचीर उभारत है, कुचमंडल चन्दन लेपलगाए ॥
जनु नीलसरोज वनीअँखियाँ, पिख दीर्घमें मनको तृप्ताए॥
कर डोलत कंकण वोलतहैं, धुनि नूपरकामसिखीहरषाए १७

मुखचन्दसरोजमनो अँखियाँ दुतिदाडमदंतनहेर लजाई ॥
जग कामनिदाघतपे जन जे दृगसिंचसुधातिनताप मिटाई ॥
नभचन्द कलाजन भूमिआई इन पेखनते मनमें विगसाई ॥
सुगुलावपिखेमधुमूरतिसी मलमूत्रता नहिदेत दिखाई॥१७६

विभ्रमवत्युवाच ॥

दोहा ।

यहमहामोह सुप्राणपति, तूं अति प्यारी नारि ॥
चलो समीप प्रसन्नकर, भाष्यो मान हमार ॥ १७७
सुनिकै मिथ्यादृष्टितव, जाइ समीप निहार ॥
महामोह महाराजप्रति, जयजय कीनउचार ॥ १७८

---

(१) उगावनीहै। (२) ग्रीष्मऋतु ॥

जाते कारजहोइ नहांनी। चारवाक रहियो सवधानी ॥
चारवाकमुख तथा अलाई। गयो वेग भूपति सिरनाई ॥१२३॥

दोहा।

महामोह तव पत्रको, वैठ पढ़ावे आप ॥
गुलावसिंह याजगतमैं, जिहछायो प्रताप ॥ १२४ ॥

मदमान उवाच ॥

छपप्य छन्द।

स्वस्ति वनारसधाम विषे पदपंकज सुहाए ॥
जीत सदा ब्रह्मंडपरे सुरनरमुनिपाए ॥
सदाऽधीन धनवंत द्वेषिगनवनहिपठाए ॥
अडिग सिंहासनवैठ शीसपर छत्र फिराए ॥
राजाधिराज महामोहपद मदमान वंदनकरें ॥
प्रभु इत पुरुपोत्तम आयतनभद्र सदामनमें धरें ॥१२५॥
और वेनती नाथ सुनो नीके मनलाई ॥
श्रद्धामातसमेत शांतिदूति सुबुलाई ॥
दयोविवेक सुमान श्रुतिके पासपठाई ॥
ज्योंत्योंकरो संवोध मोहि सँगदेहु मिलाई ॥
प्रभु वहदिनरैन संवोधकर जिह किह विधढिगआनहै ॥
वल इतपुरुपोत्तमआयतनपत्रपठे मदमानहै ॥१२६॥
और कहें विरतांत नाथ नीके मनधारो ॥
काम सहित जो धरमकहूं कहिहोतन्यारो ॥
विराग विवेक सुगूढ मनो कछु मंत्र दृढायो ॥
कहूंकहूं हरिहेतहोत हमहूं लखपायो ॥

) बुलायकर ॥

महामोह उवाच ॥

दोहा ।

पीनउरू कुच अंकमिल, कीजे मोहि निहाल ॥
हरणाक्षि शिवशिवाकी, शोभा हरो विसाल ॥ १७९
हसी सुमिथ्यादृष्टि तव, मिली सुभुजा पसार ॥
महामोह सुखताहिको, निजमुखकरे उचार ॥ १८०
अहोप्यारी संग तव, लयो रसायन सार ॥
जराइकाग्रमेटि पुन, यौवन भयो उदार ॥ १८१ ॥

सवैया ।

पूर्वेजो नव जोवनमें, सुमनोजविकार भयो वलकारी ॥
वीत मत्थेडर आनंदथे सभ औरपदार्थ थे सुखकारी
वीत इकागर ताजरठापनते मुखचन्दअमी सुनिवारी ॥
संगमते नवजोवनमें, अव फेर भयोतव प्रेम उदारी ॥ १८२ ॥

कवि उवाच ॥

दोहा ।

तरनापन तज विपय सुख, वहु दिन भजे मुरार ॥
जरठापनविन भागसठ, युवती मदनविकार ॥ १८३ ॥

मिथ्यादृष्टि उवाच ॥

सवैया ।

हाराज कहों इकवात सुनो जिह ऊपरहोत कृपाल पियो ॥
ग पूरन ताहि मनोरथहे कछु चाहत नावहु औरवियो ॥

पाशाभावसहितः—उमा महादेवकी न्याई हम तुम दोनों निर्बाध निर्भय रमितहोंगें ॥

यामेंप्रेमाण प्रभु आपतुम जानेभले मनमाहिधरो
प्रभु जिहविध मिटे अरातिगन सोउपायशीघरकरो १२७

महामोह उवाच ॥

छप्पय छन्द ।

महामूढ वहुभये शांतिते जिन डरकीनो ॥
कहांहैइगी शांतिभयोजग कार्यलीनो ॥
ब्रह्मा निसदिन करे पुनःपुन जगतनवीनो ॥
दक्षमखविनाशक शंभु रहे गौरी सुखभीनो ॥
कमलांकपोलमकरीलिखतउर हरिपयोनिधिशैनकर ॥
पुन और जगतके जीवमेंशांतिकहाकहहोइडर ॥१२८॥

महामोह उवाच पुरुषमति ॥

सवैया ।

जालम जाद सितावअवै ममकामको एहु संदेसह दीजे ॥
धर्मविहीनभयो हमसों इनको क्षणनाहि विसाहु सुकीजे ॥
जिहभांति भजेन मतो हरिको तिमयाहिभले दृढवंधगहीजे ॥
मूल इहै दृढ याहि गहो वस याहिभये नकछू मम छीजे १२९

दोहा।

भूपमौलमणि जो कहो, देवकरों वहु जाइ ॥
ऐसे पुरुषवखानकै, गयो वेग सिरनाइ ॥ १३० ॥

---

(१) अर्थसह–अन्तःकरणमेंमहामोह तथाधर्मदोनोरहतेहैं याते धर्मको निष्कासनकेआनमें भावनाकरो अर्थात् भावनानेरो। (२) लक्ष्मीके कपोलकहिये गल्लस्थलमें मकरीकहिये मत्स्यकी आकृतिचिन्हाई पत्रलेखा (रेखा) कर लिखतहैं उरस्थलमिलवें ऐसेमोहरारे। (३) दूत शिवाविचारमें धर्मतरनेवालेका नामकालहै ॥

नव जोवनते संग मोहि लयो विनसेवनते किह काम जियो ॥
करुआयसुवेगकरों भरताभम जाहि निमित्तसुयादकियो १८४

महामोह उवाच ॥

तोहि चितारतहैं निशिवासर वामउरू सुनि मोहि प्यारी ॥
मांहिदिवार यथा पुतली तिम नीत वसो मम चीत मझारी ॥
चीतविषे तव प्रेम रहो मम नीतखिरे सुमनोजकी वारी ॥
पुन मिथ्यादृष्टि प्रसन्नभई, सुप्रसादकियो मुख एहु उचारी १८९

महामोह उवाच ॥

दोहा ।

औरकहों दासी सुता, श्रद्धा शांति सुजान ॥
दूतीभई विवेककी, पत्रलिखे मदमान ॥ १८६ ॥
उपनिषत विवेक मिलापहित; भई कुट्टणी सोइ ॥
जिहविध होइ मिलाप नहिं, करो उपाय सुसोइ ॥१८७॥
एक उपाय सुमैंकहों, वही करो मनधार ॥
श्रद्धा जो उपनिपतकी, सो अव देहु निवार ॥ १८८ ॥
अकुलीनी प्रतिकूल मम, श्रद्धा पापिन नारि ॥
केशनते गहि ताहिको, देहु पखंड मतडारि ॥ १८९ ॥

मिथ्यादृष्टि रुवाच ॥

चौपाई ।

याहिकाजकी चिंत न कीजे । मम वचननते भयो पिखीजे ॥
मेरा वचन सुने जव रँडी । तजे वेदपथ भजे पखंडी ॥ १९० ॥

(१) जीवना । (२) मेरी दासीकी सुता यह गाली महान है । (३) स्त्रीपुरुषके मिलाप करावनेवालीका नाम कुट्टनी है । (४) नियामकरहित ॥

चौपाई।

ाह पुन चिंतनकरहै। कौनउपाय शांति जगमरहै ॥
॥ और उपाइन कैयै। असंतनसंग सुबोलमंगैयै १३१॥
ोभलो मम भट जेते। वेगबुलयै • संगलेतेते ॥
भुकहें वने तिमकयो। ऐसेभाप पुरुष इक गयो॥१३२॥

दोहा।

क्रोधलोभ दोनों तबै, आए सभामझार ॥
गुलाबसिंहनृपवंदपद, लागेकरन उचार ॥ १३३ ॥

क्रोधउवाच ॥

सवैया।

[मोहिसुनीयहबात कहें, तुम्हरे सँगशांति विरोधकमाए॥
॥ हरिकी पुन भक्ति तथा, तिनकी यह दोनभई सुसहाए॥
जीवत शांतिकी वाति कहां, यहचाहतीतीनहुप्राणगवाँए॥
कोवल नाथ कहांकहिये, कछुभापतहो सुसुनो मनलाए॥
करों दृगवंतनको श्रुतिवंतनकोंवधरोंकरडारों ॥
वंतनकोंसुअधीरकरों, पुन चातरकी मति दूर निवारों ॥
कार्य नाहिपिखे कवही, जिनके उर भीतरमें पगधारों ॥
आत्मको नसुने कवहीपव्यो, जितनो क्षणमाहि विसारो॥

लोभ उवाच ॥

सवैया।

नके सिरऊपर हाथ धरों तिनकी सुदशा सुन मति चलावें॥
नोरथकी सरिता परकूलहि नाहि कदाचित तेनर पावें॥

जीवन जवलग होई। वसे पखंड ग्रहते पर्दयोई॥
ाधर्म मिथ्यामुक्ति। मिथ्यावेद मिथ्यायुक्ति॥ १९१॥

दोहा।

याविधि मेरो वचन सुनि, तजे वेदपथसोइ॥
जनवेदन श्रद्धा मिटे, कहि उपनिपर्दमें होइ॥ १९२॥

सवैया।

खाननपाननती सुखहै वहु मोक्ष कहो कत आवत कामा॥
ोक नहीं सुखहोइ कहां उलटे सुत नारि तजावत धामा॥
वंचनके हित व्योतरची जन धूरंत वेद धरे तिह नामा॥
ा सुन यों पथ वेद तजे सुपखंडनके वसह्वै वहु वामा १९३॥

महामोह उवाच॥

चौपाई।

करें पिआरी जवही। मेरो इष्ट सिद्धजग तवही॥
हि प्रेम भयो अधिकाई।सुखचूम्यो गहिकंठ लगाई॥१९४॥

मिथ्यादृष्टि उवाच॥

चौपाई।

यह नाहिं रीति सुहैहै। मेरो चीत सुवहुत लजैहै॥
ह तव,कौन उचारा। धस्योवनेअत्र वास अगारा॥१९५॥

दोहा।

ऐसै मुखो वखानके, गयो अखाडो त्याग॥
पिख भूपति विसमै भयो, गुलावसिंह वडभाग॥१९६॥

तव पद दासी। (२) मकार का ठगी वा बनावट। (३) वक्षोंने।

तिनके उर अंतर शांति कहां, नरजो धनको दिनरैनहि ध्यावै॥
अब क्रोधसखे सुनिये सुकहों जिह भांतिनतेधनमैमनलावै ॥
इह मत्तगयंद सुझूलतहैंमम एहुतुरंगम भौनसुहाए॥
लिखपत्र सुभूपतिमोहिदयो, धनल्यावोंऔर वंगालहिजाए॥
इहगांउदयेकछुऔरकहे नरजे इह भांति सुचीतचध्याए॥
तिनके उरशांतिकीकौनकथा, इमचिंततही जगमाहिबुढाए॥

क्रोध उवाच ॥

मोहि प्रभाव सुमीत सुनोममसंगहते जन एहुकमाए ॥
तुष्टाद्रिजपूंत हने मघवा शिव शीश विरंचिकेकाटवगाए॥
वाहजमारसुश्रोणतमैंभृगुनंदनआपभलीविधनाए ॥
सुवसिष्ठमुनीश्वरके सुतजे मुनिकौ शिक आप सुताहिंहताए॥

दोहा।

विद्याकीरतिवंत पुन, सदाचार दातार ॥
मेपदके प्रताप नर, क्षणमै भजे विकार ॥ १३९ ॥

लोभ उवाच ॥

चौपाई।

तृश्ने आउवेग इतओरा। मेरो वैनसुनो श्रुतभोरा ॥
तृश्नावैठ समीप उचारे। आज्ञाकरो सुप्राणप्यारे॥१४०॥
लोभ कहे सुनप्राणप्यारी। क्षेत्रग्राम पुन नगरउदारी॥
पुर अरु दीप भूमिको चहे। आशापाश जिनके मनगहे १४१
तिनपर कृपासु ऐसीकरियो। ब्रह्मांडलापनहतामन भरियो ॥
तृष्णे जांउर चरन टिकैहैं। शांतिकहा जगतेनर पैहें॥१४२॥

(१) वार्ता। (२) वृत्रासुर। (३) विश्वामित्र। येसर्वेगायाल्लोकमें प्रसिद्धहै ॥

दोहा।

करुणा सखीसमेत पुन, शांति सुशील उदार॥
जैहै श्रद्धाशोधहित, जगसभ पंथमझार॥१९७॥

इति श्रीमन्मानसिंह चरण शिक्षित गुलाबसिंह विरचिते प्रबोधचन्द्रोदय नाटके द्वितीयोऽङ्कः समाप्तः॥ २ ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक द्वितियांऽकटिप्पणिका समाप्ता॥ २ ॥



तृष्णोवाच ॥

दोहा ।

आर्यसुतमै आपहीं, सदाचहों सभभौन ॥
अवआयसु तुमरीभई, मम तृप्तावै कौन ॥ १४३ ॥
ब्रह्मांडकोटको पाइ नरमें उर संगति होइ ॥
मेरो उदर नपूरई, तामहि शांति नकोइ ॥ १४४ ॥

क्रोध उवाच ॥

चौपाई ।

हिंसेआउ तूंइत मम ओरा । भाषत वैन सुनो तुममोरा ॥
इतनेमे हिंसाढिग आई । आर्य्यसुत मम देहुवताई १४५॥
तूंमम धर्मचारणीनार । यहतव संगतिको उपकार ॥
मातपितादिक वधहे जोई । करें सुपेन डरें नहिकोई॥१४६॥

सवैया ।

कौन पिसाचनी मात अहे पुन कौन सुमकंड तात हमारे ॥
भ्रातसभे ममकीट समा, अव वाधव पुंज वने सभमारे ॥
जातें जये खलहै सभही, इमवोलतहैं जनकीस पुकारे ॥
मीज दोऊकर क्रोधवली,कविसिंहगुलावसु एहुउचारे॥१४७॥

नराज छन्द ।

सुगर्भलौंइनेकुलं समस्तआज मारहों ॥
युवासुवाल वृद्धलौ, नएकको उवारहों ॥

---

(१) मेरे वचनके करनेवाली । (२) तेरे संगतिसें जीवको यह उपकार होनाचाहिये । (३) मकडनाम पक्षवालेजीवविशेषकाहै तथापि शाचकाहै तथा पाखंडी-काहै तथा कंजर (वेश्यासंबन्धी पुरुष) का है यह प्रसंगसें जान लेना । (४) जितने-उत्पन्नभयेहैं ॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

अथ तृतीयोङ्कप्रारंभः ॥ ३ ॥

दोहा ।

माया जिह जग मोहियो, वहु कुपंथ भरमाइ ॥
वहु रघुनायक दासके, होवै नीत सहाइ ॥ १ ॥
जिहविध कलियुग फैलियो, सकल भ्रमायो लोइ ॥
गुलावसिंहनृप सभामें, प्रगट दिखावत सोइ ॥ २ ॥

सवैया ।

ते इहभांति गए जवहीं तव शांति तथा करुणा तहँ आई ॥
ऊँच वुलावतहै जननी मम उत्तर देहु कहा मम माई ॥
शांति सुनयनननीर वहै कहँ मात गई नहिं देत दिखाई ॥
तो विन जीवन मोहि कहांअव प्राण तजों सुलगे दुखदाई॥३॥
मृगरंजतकाननप्रीतिहुती जल शैलनमें तवप्रीति नई ॥
अति पावन थानन प्रीति हुती तपसा तनमैं लवलीनभई ॥
जिम भौनचंडालन गौकपिला तिम मात पखंडनहाथ गई ॥
अव जीवनमातको होत कहां तनडारइहांयमधामगई ॥ ४॥
विन मोहि पिखे नहिं नावतथी अरु नाहिकछू जननीमुखपाए॥
नहिसोवत मोहिविना कवहीं नहिमोहिविनापथमाहि सिधाए

(१) जैसे सर्वगौओंके मध्यमें कपिला गौ उत्तमहै; तैसे शांत्यादिकोंके मध्यमें श्रद्धा उत्तमहै ॥

समस्तभूमिके विषे नयाहिकोठराइहै ॥
सुक्रोधज्वाल नैनकी, विरामतो सुपाइहै ॥ १४८ ॥

कवि रुवाच ॥

दोहा।

हिंसा तृष्णा क्रोध पुन, लोभ मिले यह चार ॥
जाइ समीप सुमोहके, जयजय कीन उचार ॥ १४९ ॥

महामोह उवाच ॥

दोहा।

श्रद्धापुत्रि शांतिहै, हमसंग वैरकमाइ॥
तुम तिह ल्यावो बांधिके, आयसुमेरी पाइ ॥ १५० ॥
श्रद्धापुत्रीबंधहित, गए माननृप वैन ॥
गुलाबसिंह साचीकहे, भयो अखाडेचैन ॥ १५१ ॥

चौपाई।

महामोह पुनकीन विचारी। श्रद्धापुत्री शांति विचारी ॥
तानिग्रहको और उपाइ। सोमेरे उर भास्यो आइ॥१५२॥
शांतिमातश्रद्धाहे जोई। रहेपरतंतर सदा सुसोई ॥
उपनिषतविषे श्रद्धा नरजेती। प्रथम हटैयेसगली तेती॥१५३॥
मातवियुक्त जबै वहु होई। मरे शांति क्षणभीतरसोई ॥
श्रद्धावेग हटावनकाज। मिथ्यादृष्टि बुलैये आज॥१५४॥
इतउत भूपति दृष्टिपसारी। विभ्रमवती सुताहिनिहारी ॥
विभ्रमवती प्यारी जेये। मिथ्यादृष्टिसुबोललिअैये१५५॥

(१) माधीन ॥

श्रद्धाविनं मोहिपिखे मरती, नहिं एक महूरत प्राण रहाए ॥
अब तांविन जीवन मोहि विडंवन, प्राणवने यमधाम सिधाए५
करुणे सजनी अब शांति मरे, जग तूं मम देहु चिता सुवनाई॥
अब मोहि विलंब सुहातनहीं, तन देहु हुताशनमांहि जलाई॥
जनचित्त निवासतजोंसजनी, तहँजाउँ जहां सुगई मम माई॥
सुन शांति विलापमहाकरुणा, दृगनीर बह्यो सुलईगललाई६॥

करुणोवाच ॥

सवैया ।

सजनी इह भांति कहे मुख अक्षर,ज्वाल मनो सुदेवानलकी॥
तन प्राण चिलातठरातनहीं डरमोहि भयो मछलीथलकी ॥
सुमहूरत प्राण धरो न मरो मुखकंज प्रसन्न नहो हलकी ॥
अव सोध लहे जगमें श्रद्धा, न मुई कछुवांत भई कलिकी७॥
इत औ उत पुन अरण्यपिखेमुनिआश्रमजेसुतपोवनमाहीं ॥
तटगोमतिके यमुना तटमें कि वसी सुभगीरथिकेतटमाहीं॥
कदाचित मोहमहीप डरी, छपिजाइ वसी गिरि कंदरमाहीं ॥
कुरुजांगलके मखसालनमें श्रद्धा कहूं जाइवसी जगमाहीं ८

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

सखी निहारेगी कहां, श्रद्धा कथा न लेश ॥
मैंकुरुक्षेत्र सुगोमती, औरपिखे सभदेश ॥ ९ ॥

---

(१) मोहि पिखे विन श्रद्धा मरती, इस कहनेकर श्रद्धा शांतिकी व्याप्ति प्रतीत होवैहै अर्थात् जहां श्रद्धाहै तहां शांतिहै। (२) अग्नि। (३) वनकी अग्नि। (४) कलिका विडंवन है॥

विभ्रमावत्युवाच ॥

देवकरीजो आयसुमोको । मिथ्यादृष्टिमिलावों तोको ॥
इमकहि त्याग आखाडोगई । मिथ्यादृष्टिसहित पुन अई १५६॥

अथ प्रश्नउत्तर मिथ्यादृष्टिविभ्रमवतीका ॥

मिथ्यादृष्टि रुवाच ॥

चौपाई।

पेपेबहुदिनभये वितीत । निकटिजात लाजत मम चीत ॥
महाराज उपलंभनकरे । ताते चीत सखी ममडरे ॥१५७॥

विभ्रमावत्युवाच ॥

सखी तोहिमुखकंज निहारे । तोभूपति निज आप सँभारे ॥
तूं वाको है अतिसै प्यारी । ताते डरो न चीत मझारी १५८॥

मिथ्यादृष्टि रुवाच ॥

सखीअलीकसुभागहमारा । काहेको तें वहुत उचारा ॥
भूपति मोमै चीत नधरई । तुं ममकाहि वडंवन करई १५९॥

विभ्रमावत्युवाच ॥

सखी अलीक सुभाग हमारे । अवही तूं निजनैन निहारे ॥
तेरो तनु जव भूप निहारे । तोमै रमैं न और चितारे १६०॥
और सखी इक वातिउचारों । घूमतनैनसु तोहि निहारों ॥
कारण कौन न निद्रा कीनी । घूमतनैन सखी रसभीनी॥१६१॥

मिथ्यादृष्टि रुवाच ॥

एकपतीकी जो वहुप्यारी । तिनके नींद न नैनमझारी ॥
मोको सगललोक जग गहैं । नीद नैन मम किहविधि लहैं १६२

सवैया।

सरितातटमें बहुभांति पिखे तपसी जिनमाहि अनेकसुहाए॥
पुन मोहि मीमांसकधाम पिखे चर्मसाकर यूपसुथान बनाए
पुन आश्रम चार निहाररहीदिनकोटिनकोटन जातगिनाए॥
नहिंबात सुनी कहुं काननमेंश्रद्धासजनी किहठौरबसाए१०

करुणोवाच॥

चौपाई।

सखीकहों श्रद्धाहै जोई। पखंडनके बसपरे नसोई॥
जे अतिपुण्यवती जगनारी। ते यों विपति न लहे प्यारी॥११॥

शांति रुवाच॥

दोहा।

सखीकहों इकबात सुन, जो धाता प्रतिकूल॥
कहो असंभव कौनगति, वेसभ अपदा मूल॥ १२॥

सवैया।

जनकात्मजा गृह रावणके सुबसी दुःखभांति अनेकभरे॥
बसें दानव वेदत्रयी सुभई तिनजाइ रसातल बासकरे॥
पुन गंधर्वकी दुहिता पतिदैत्य हरी सुमदालस रूपवरे॥
विधिवासभयेजगमें सजनी कहुआपदकौनन शीशधरे॥१३

---

(१) पांत्र विशेष। (२) कार्याऽसिद्धिमें क्या आश्चर्यहै। (३) सीता। (४) मदालसा नामक कन्या पातालकेतु नामक दैत्यने हरली यह गाथा तुलसीदास कृतरामायण, तथा श्रीमद्भागवतमें प्रसिद्धहै इसप्रकार श्रद्धाका पाखण्डोंके हस्तमें जानेका दैवही मूलहै वेदवाह्यकानाम पाखण्डहै।

विभ्रमवत्युवाच ॥

दोहा ।

सखी प्यारी लोक वहु, मोकों करो उचार ॥
जे तोकों निशिदिन भजे, जासो करें प्यार ॥ १६३ ॥

मिथ्यादृष्टि रुवाच ॥

चौपाई ।

सखी मोह मम नाह पछानो । काम क्रोध लोभ पुन जानो ॥
अथवा सुनो तत्त्व निजसार । एक एक कहि करों उचार॥१६४॥
याकुलभीतर जेनृप जाए । मोहिविपे सगले मन लाए ॥
वालक वृद्ध युवा पुनि जेई । मोविन रहे न निशिदिन तेई १६५

कवि रुवाच ॥

दोहा ।

काम क्रोध पुनि लोभ यह, गुलावसिंह मदमान ॥
तनमै आत्मदृष्टि विन, होत नहीं पहिचान ॥ १६६ ॥

विभ्रमवत्युवाच ॥

चौपाई ।

कामहिकी रति परमप्यारी । हिंसा क्रोधकी सुनी सुनारी ॥
तृष्णा लोभहिकी जग गैहे । याविध नारि सुऔर वतैहै॥१६७॥

दोहा ।

तूंसभके पतिसों रमहि, इहै वतावो मोहि ॥
तेचुपकी क्यों होइरही, करे न ईर्षा तोहि ॥ १६८ ॥

(१) शरीरमें आत्मबुद्धिविना इनकी प्रतीति होवै नहीं किंतु शरीरमें आत्मबुद्धिसे ही इनकी प्रतीति होवैहै ॥

दोहा।

श्रद्धा तहां जिहोइ॥
ुखी, इमकहि चाली दोइ॥ १४ ॥

सवैया।

डरी सजनी मम राक्षसनैन निहारे॥
क्षसहै करुणा तव पीठहिपीठउचारे॥
ते तनमें दुरगंध भयानक भारे॥
महा इहमूंडेपिसंग सुझंड खिलारे१५॥

दोहा।

वेपे, आवतहै इतओर॥
सकों, चित्त डरतहै मोर॥१६॥
नहीं, पुर्दगलहै वलहीन॥
न पुन, ऐसो परम मलीन॥ १७॥
शाच यह, ऐसे मेमन आइ॥
ाचनाहिं, वहु निसमें प्रगटाइ॥ १८॥
ाशमें, किरणप्रकाशे लोइ॥
ा, कहिअवकाश सुहोइ॥ १९॥
ाचनाहिं, तो यह पापी आहि॥
नरकते, आवतहै पथमाहि॥ २०॥

ाहे लगाया है। (२) मस्तकमें भूसरंगकी जय
(४) (पुद्गलं वपुरमनः) अर्थयहः—आत्माके

मिथ्यादृष्टि उवाच ॥

चौपाई ।

कैसे सखी ईर्षा करई । मोहि विन प्राणनते क्षण धरई ॥
रति हिंसा तृष्णालौं जेती । मेरो भलो मनावें तेती ॥ १६९॥

कवि उवाच ॥

दोहा ।

मिथ्यादृष्टि सुमरे जव, गुलाव सिंह इम जान ॥
हिंसा तृष्णा आदिलै, होइ सगल पुन हान ॥ १७० ॥

विभ्रमवती उवाच ॥

चौपाइ ।

याहिते सखी मोहि वखानी । तोसम सुभग न दूसरी रानी ॥
तोहि सुभाग जवै वहु लहे । ते गतिरूपप्रसादहि चहे ॥१७१॥

सवैया ।

सखि औरकहों निशिनींदविना जुगनैन सरोजसुतेंअकुलाए॥
युगनूपरकी धुनि चीतहरे परभूमिविषे पदते खिंसलाए ॥
गजगामनि तूं गति मंद चले उर चाहततें निजनाह रिझाए॥
इह लक्षण जो तव नाह पिखे डरहों उर संककरें सुनसाए१७२

मिथ्यादृष्टि उवाच ॥

सवैया ।

सखि काहेतसंकभई तुमको हम नाहिकीआयसमेंसुखपाए॥
इक और कहों सुनमोहि अली जिहतेसगलोडरतोहिमिटाए॥

---

(१) मिथ्या जो देहइंद्रियां अन्तःकरण इनमें जो दृष्टि कहिये इनमें जो आत्माका तादात्म्याभिमान मरे कहिये निवृत्तहोवे जब तव। (२) स्वस्थानसे भ्रष्टहोतेहैं ॥

वहुरोशांति विचारकर, अब मैं लखियोनृतांत ॥
महामोह पठयो अयो, यह जग जैन सिद्धांत ॥ २१ ॥
याको दर्शन दूर तज, यह अति पतित मलीन ॥
ऐसे शांति वखान के, फिर चाली मुखदीन ॥ २२ ॥

करुणोवाच ॥

दोहा ।

सखीमहूरत थिररहो, श्रद्धा लेहि निहार ॥
यही परखंडी भाखिये, मत या भवनमझार ॥ २३ ॥
गुलाव सिंह इम भापकर, दोनों खरी इकांत ॥
तव नृप सभा प्रवेशकर, वोल्यो जैन सिद्धांत ॥ २४ ॥
नमोनमो अर्हतपथ, जे जन चले उदार ॥
भुक्तिमुक्ति दोनोंलहै, मैं अव करों उचार ॥ २५ ॥

कवित्त ।

नव है द्वार तन भौनके मझार पुन,
आत्मा प्रकाशदीप ताहिमें सुहाई है ॥
जैन वरभाख्यो सिद्धांतसुइकांत यह,
गहे जनजोई जगसूख मोप पाइहै ॥
अरे सुन श्रावक सुवाकमें वखानो तुम,
मलमय प्रमाणुते सुदेह उपजाइहै ॥
मूढनर शुद्धकरें शीतजल शीशपरें,
होवत न शुद्ध जलकोटन नवाइहै ॥ २६ ॥

) दिगम्बर सिद्धान्तशास्त्र। (२) दीपक दृष्टान्तसे आत्मापरिच्छिन्नपरिमाण । (३) व्यभिचार रहितहै अर्थात् निर्दोषहै । (४) शिष्य ॥

ा।
, रिपिसेवा तिहज्ञान ॥
नहोकरों वखान ॥ २७ ॥
या।
नन्दनशीश निवाइ करो ॥
ताहि जिवावहु जोरकरो ॥
मनमें नहि रंचक रोप धरो ॥
ांति करो भवसिंधुतरो ॥२८॥
ह्यो श्रद्धे इतआउ कहां चिरलाए
, इनपेखत कोन कनात हलाए ॥
ुन जैनसमान सुवेस वनाए ॥
ुन शांति दुःखी सुभईसुरझाए२८
उवाच ॥
हा।
ो, श्रद्धे तूं गहि आज॥
सिद्धहोइ मम काज ॥३०॥
हा।
राजकुलीन महान ॥
ऊ, करुणाशांति वखान ॥३१॥
ोवाच ॥
हा।
काहेतूं डरपाइ ॥
हि कछु और वलाइ ॥ ३२॥

ानलए,
ायोहै॥
ा वडे,
ोहै॥
ाहि कह्यो,
ठगायोहै॥
कराल अति,
सायोहै॥ ९१॥
॥

ीवडे,
ाइहै॥
ाइगए,
आइहै॥
ाइलए,
ाइहै॥
भाव जाहि,
ाइहै॥ ९२॥
प्रभावनयो,
ीजिए॥
दिवडेदेव,
दीजिए॥

। वैष्णव उच्चारण करतेहैं तैसे बद्रके

चौपाई

आहिंसा देवी मोहिं सुनाई । पखंडधाम श्रद्धा इक आई ॥
परवहु अंवातेहे आन । तामस श्रद्धा कहे वखान ॥३३॥

दोहा ।

ताते श्रद्धा तामसी, यह तूं क्यों डर पाइ ॥
ऐसें करुणा भाखियो, अव पुन शांतिअलाइ ॥ ३४॥

शांति रुवाच ॥

चौपाई ।

सावधान सजनी में होई । जैसें कहे वार्तिहे सोई ॥
यह अतिदुराचारणी है ये । अंवा सदाचार रतिपे ये ॥ ३५ ॥
यह दुर दर्शनरूप मलीनी । अंवा प्रियदरशन सुखभीनी ॥
ऐसो रूप ताहि नहिं होई । संसा मनमें करो न कोई ॥३६॥
अंवा याके वस नहिं होई । जो तूं कहे वात है सोई ॥
चलें अगारी सौगत धामा । तहाँ मिले जो वहुअभिरामा ३७
यों कहि चली अगारी जवहा । भिक्षुक एक निहाऱ्यो तवहीं ॥
पुस्तक हाथविपे दर्शायो । बौद्धसिद्धांत सभामहि आयो३८

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई ।

क्षणभंगुर सकल पदार्थ हैये । है भीतरवाहर समपैये ॥
अहे निरात्ममाहि ज्ञान । दर्पणसम सुख होवै भान ॥३९॥

(१) बुद्धशाखाऽभिमानिदेवता । (२) घटादिकविषय बुद्धिमें कल्पितहोनेतै
अन्तरवर्तिहुएभी भांतिसे बाहरकी न्याई भतीत होवै है । अहे निरात्ममाहि
ज्ञान ॥ दर्पणसमसुख होवैभान ॥ याका अन्वय यहहै:—ज्ञानमाहिनिरात्मअहै अर्थात् ज्ञान
कहिये बुद्धिरूपआत्मामें प्रवृत्तिविज्ञानधारारूप अनात्मस्थितहै सो आत्मख्यातिसें बाह्यभतीत
होवैहै जैसें ग्रीवा स्थितमुखदर्पणमें भासे है तैसै ॥

नभरविचन्दऔनक्षत्रकेकदंवजिते,
कहो याहिगतेधरवैठेहीरुकीजिए ॥
कहो नरनागर सुभूमिजल पूरदियों,
कहो क्षणभीतर सुतोयसभ पीजिये ॥ ९३ ॥

क्षपणक उवाच ॥

सुनरे कपालक सुभईमति वालक,
सुमानवको मूंड तव करमै उठायोहै ॥
काहूं इंद्रजालक सुमायाको दिखाइ तव,
मोह मन लयो उर तोहको भ्रमायोहै ॥
ऐसे सुन कान सुकपालक मलान अति,
दावि दोऊकान मनमाहि खुनसायोहै ॥
इंद्रजालवत भर्गवंतको सुमूढकहें,
तीनलोक जाहि क्षण एकमै वनायोहै ॥ ९४ ॥
तोहि दुष्टात्मता सुमोहिते नसहीजाइ,
काढिके सुखग अव करमै उठाइहों ॥
कालकरवालसों उतार भाल तेरो अव,
कंठ तव नालते सुलोहूकोचुआइहों ॥
डमरू वजाइ पुन भूतकिलकाय संग,
काट तव मूंड सुभवानीको चढाइहों ॥
श्रोणतकी धार छुटे फेन अरु बूंद उठे,
पेखि मुखहसें शिवपतनी रिझाइहों ॥ ९५ ॥

(१) महादेव ॥

सो वहुज्ञान वासना हीन । फुरे विषय विनु लखैप्रवीन ॥
यों कहि पोथी आगे धरी । शीशनिवाइप्रकरमाकरी ॥४०॥
अहो साधु यह धर्म सुहायो । जो निजमुखते बुद्ध वतायो ॥
यामैं सुखमोक्ष जगदोई । खेदविना जनपावै सोई ॥४१॥
सेवकके निज भौनमझारे । सुंदरवास सुमाहि चुवारे ॥
मनअनुकूल वनककी नारी । वहुविध भोजन धरेसवारी४२॥
कोमलसेज सुवणक विछाए । जोर दोऊ कर देइवैठाए ॥
श्रद्धासहित उपासक जेते । युवतीसहित भजे पदतेते॥ ४३

दोहा ।

अंगराग तनलाइकै, वणक मनोहरनारि ॥
भजे निशाशशिऊजली, पद निजपाणि मझार ॥ ४४ ॥

करुणोवाच ॥

सवैया ।

सजनी यह कौन सुआहिइहा तनुतालसमान सुजाहिलंवायो ॥
सुपिसंगकैपाय धरे तन अंवर सूक्ष्मजो धरमै लटकायो ॥
पुन भाल सुकिंचित मुंडतहै किपिखो कचमूलहुते उखडायो ॥
द्रुमछाल विसालसुनाल धरी नयती यह जान परे रक्तकायो ॥

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

वौद्धागम सजनी इहै, भिक्षुक रूपवनाइ ॥
वंचतहै सभलोकको, यों मेरे मनआइ ॥ ४६ ॥

(१) कुङ्कुमचन्दनादिलेप। (२) टाल तथा सुगन्धीवाले वस्त्रधारणकीये हैं ॥

हा।

नोखगनिकार ॥
यो, लागो करन उचार ॥ ९६ ॥
उवाच।

हा।

महाभाग इमजान ॥
, ऐसे सुखो वखान ॥ ९७ ॥
ो, वारन कीनो आप ॥
पणकहै निहपाप ॥ ९८ ॥
व, हनो न याके प्राण ॥
, कीनोखगमियान ॥ ९९ ॥
र, वहुर पुछे विख्यात ॥
तदपि पूछों वात ॥ १०० ॥
न, क्षपणक प्रश्न सुकीन ॥
ं, अहे सुपरम प्रवीन ॥ १०१ ॥
कसे मोक्ष तुहार ॥
ीकि करो उचार ॥ १०२ ॥
क उवाच ॥

पाइ।

आनँद वोध विपयमें लखै ॥
वहीसूख कछु और नहोई॥१०३॥

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा ।

यतीउपासक औरसभ, सुनो सुनिजनिज कान ॥
वाक सुधारस बंधहर, कहे सुगत भगवान ॥ ४७ ॥
योंकहि पुस्तक लीनकर, खोलि नवायो शीश ॥
गुलाबसिंह पेखत सभे, राजसमाजमहीश ॥ ४८ ॥
दिव्यनैनसभकी पिखो, गति शुभाशुभ दोइ ॥
क्षणभंगुरसभ भाववहैं, थिर नहिं आतमकोइ ॥ ४९ ॥

सवैया ।

इमजानत जो सभमोहजितोनिजदारन औरअगारनमाही ॥
भिक्षुकजो घरमाहि रमे तव द्वेष न रंचकरो मनमाही ॥
मन कोमलतो इहभांति मिटे पुन नेपथ्यपेखि कह्योमुखमाही ॥
श्रद्धे इतआउ विलंवकहा सुप्रवेशकियो श्रद्धाक्षणमाही ५०

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

देव करो आयसु प्रगट, करों कौन अब काज ॥
मे क्षणमें सोईकरों, तुम सभके सिरताज ॥ ५१ ॥

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा ।

भिक्षुक सेवक सकलजे, ताको गहि निजहाथ ॥
मोहिमतेअतिथिरकरो, सभे निवावे माथ ॥ ५२ ॥

---

(१) यती नाम साधु तथा सेवक । (२) पदार्थ । (३) बुद्धिनिर्मलित है ॥

आत्मस्थित मोक्ष वखाने । ते पशुबुद्धि सुमहा अजाने
उपलअवस्था वहुजगअहे । बुद्धिवंत तिह किह विधचहे॥१०
अपनीवयकी जो अनुरूपा । युवती मिले सोमोक्ष अनूपा
यापर संमंत तोहि दिपाऊं । तेरो सव संदेह मिटाऊं ॥ १०५
पारवती प्रतिरूप नवीना । तासंगरहे सदा सुखभीना
चन्द्रचूड शिव मुक्तिभनीजे । क्रीडाकरें दरस दुःखछीजे॥१०

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा ।

श्रद्धालायक नाअहे, महाभाग यह रीत ॥
विपयराग वीत्यो नहीं, मुक्ति कहा तिह मीत ॥१०७॥

क्षपणक उवाच ।

दोहा ।

अरेकपालक रोपतजि, पूछों वात प्रसिद्ध ॥
अर्धशरीरी मुक्तिपुन, यह मत सकलअशुद्ध ॥ १०८॥
सुनत कपालक मनविपे, कीनो इहे विचार ॥
याके अंतः करणमें, अहे अश्रद्धाभार ॥ १०९ ॥
निजमतश्रद्धा आज पुन, लीजे वेगवुलाइ ॥
मुखोंवखान्यो प्रगट तिन, श्रद्धे तूं इतआइ ॥ ११० ॥
तव आई श्रद्धा तहां, रूप कपालक धार ॥
करुणा ताको हेरकर, कीनो शांतिउचार ॥ १११ ॥

(१) सुखानुभवसे रहित जे जीवकी स्थिति मुक्ति मानतेहैं । (२) दृष्टांत । (३) पार्वतीके सदृश स्त्रीके साथ जो क्रीडाकर्ताहै सो मुक्त कहाजाताहै ऐसे महादेवजी कहतेहैं अर्थात् उमासहित महादेवके उपासकोंको सरूपामुक्तिकी प्राप्तिहोतीहै यहतात्पर्यार्थहै । (४) अर्धांगीकी मानिहो जिनके मनमें मुक्तिहै सो पूर्वकहा भी है अपनीवयकीमोअनुरूपा ॥ युवती मिलेसो मोक्षअनूपाइति ॥

श्रद्धोवाच ॥

जो आयसु सोईकरों, ऐस वखाने वैन ॥
निकसि चले वै सभाते, शांतिनिहारे नैन ॥५३॥

शांति रुवाच ॥

सजनी यहभी तामसी, श्रद्धा जानी मोहि ॥
करुणा कह्यो सुऐंवहै, भली पछानी तोहि ॥ ५४ ॥
याअवसर क्षपणक अये, लावो डीलसुहाइ ॥
भिक्षुक जातो हेरकै, ऊचेलयो बुलाइ ॥५५॥
रेभिक्षुक इतआउ तुम, कछु पूछो अव तोहिं ॥
तेरी मेधा मैं पिखों, प्रगट वखानो मोहि ॥ ५६ ॥
सुनि भिक्षुक पुनि कोंपियो, भाषे वचनकठोर ॥
हापापी मलपंकधर, लेहि परीक्षा मोर ॥ ५७ ॥
क्षपणक कहे सुक्रोध तज, करो वेगि अतिरोध ॥
शास्त्रगति कछु पूँछहों, काहेकरो सुक्रोध ॥ ५८ ॥

भिक्षुक उवाच ॥

क्षपणक तूं कछु जानहै, शास्त्रकथा उदार ॥
भवतु प्रतीत पूछो सुअव, भाखों क्रोधनिवार ॥ ५९ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई।

क्षणभंगुर तव मतआत्मअहै । काहिनिमित्त व्रततुमगहै ॥
याको उत्तर प्रथम उचारो। क्षणक आत्मा किहविधितारो ६०

(१) अरेक्षपणक शास्त्रमपिवेत्सि । भवतुमातिक्षामस्तावत् उपसृत्यकिंपृच्छसि ॥ यह संस्कृतका पाठहै अर्थ यहः—भवतु कहिये जैसा तू जानताहै तैसा जाणो परंतु मैंभी तेरी परीक्षा करताहूं ऐसे कहिकर भिक्षुक क्षपणकके समीप जायकर कहनेलगा कहुं क्या पूछता है क्रोधरहित होय कर मैं तेरेको उत्तर कहताहूं यह दोहाका भावहै ॥

सखी रजोगुणकीसुता, श्रद्धा याहि पछान ॥
गुलाबसिंहकवि रूप तिह, आगे करे बखान ॥ ११२ ॥

सवैया ।

नील सरोज विलोल महादृग मांग संधूर सुपूर बनाई ॥
सुंदर भूषण आहि घने नर हाडनकी गलमाल सुहाई ॥
पीननितंब सुपीनकुचाकटि मध्यम आननचन्द लजाई ॥
आइ प्रदक्षण ताहि दई कहिस्वामिन् आयसुदेहु बताई॥११३
हैअभिमान बडो इनको अब भिक्षुकको गहिलेहु पियारी ॥
योंसुनवात कपालककी हँस भिक्षुक अंकमिली भुजडारी ॥
भिक्षुक सानँद अंकलई तन रोमखडे सुजगे शिवओरी ॥
सुअहोसुख याहि कपालनिका हम धंनभये इमबात उचारी॥
पीन पयोधर नारि कबूं जिनके मतना मम अंक छुहाई ॥
भूलपिखों तब मारकरें अरु दोपजनावत ग्रन्थ सुनाई ॥
श्रावग औ तिनग्रन्थनको शतवार धिकारवडे दुःखदाई ॥
आजकपालनिपीनकुचाछुहि मोदवढे सुवडी सुखदाई॥११५
सुअहो शुभपुण्यकपालकके जिनके मतयाविधकोसुखपैये॥
सुअहो यह सोमसिद्धांत बडो, जिनके सम और नदूसरहै ये॥
पुन है यह धर्म अचंभ वडो, वडभाग सुनो सुकहासुख गैये॥
अब मैं दृढश्रावगपंथ तजे, कबहूं तिनके मत भूल नजैये ११६
परमेश्वरको यह सोमसिद्धांत, सुतांहिविषे अब मैं चलआयो॥
अब तूं गुरुशिष्यसु मोहि पिखो गुरु सीपदिजे सुपरंतव पायो॥
पिख ताहि दिगंबर कोपभये, सुकपालनिसों तब अंगछुहायो॥
शठ भिक्षुकदूरचलो अति दूपत क्यों मम आवतहैनिकटायो ११७

(१) कामदेव ॥

भिक्षुक उवाच ॥

अरे अरे अब करों बखानं । मेरो मतो सुनो निजकान॥
विज्ञानलक्षण आत्महै जोई । रहे संतान मरे क्षण सोई॥६१॥

दोहा ।

अस्मतपंक्तिपरो पुनः, कश्चितज्ञान सुहोइ ॥
नष्टवासना ऊजलो, मुक्ति लहेगो सोइ ॥ ६२ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई ।

सुन मूर्ख जन्मान्तरमाही । जो आत्मको मुक्ति लहाही ॥
तो अब नष्टकलेवर थारा ।कौनलाभको तव उपकारा॥६३॥
पूछों और सुनो मनलायो । किन तव ऐसो धर्म बतायो ॥
ननु सर्वज्ञ बुद्धहै जोई । ताहि कह्यो यह धर्म सुसोई६४

दोहा ।

बुद्ध भयो सर्वज्ञजो, कैसे जान्यो तोहि ॥
याको उत्तर होय जो, प्रगट बखानो मोहि ॥ ६५ ॥

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई ।

बुद्ध बनायो आगम जोई । तामें कह्यो सर्वज्ञ सुसोई ॥
तातें तां सर्वज्ञ सुजाने । बुद्धवाक यह प्रगट बखाने॥६६॥

---

(१) अस्मत्पंक्तिपरःइत्यादि विज्ञानसंततिमें विज्ञानसंस्थानमें कश्चित्इत्यादि कोई विज्ञान-रूपमुक्त वासनारहित तथा उज्वल तथा वासनारहित हुआ कोई मुक्तिको पावेगा। (२) यदि मन्वन्तर (कालान्तर) में कोई आत्मा मुक्तिको पावेगा तो अब तेरे शरीरके नष्ट होनेसे तुमको लाभ उपकार करेगा न कहूनी करेगा यह कौनसा भाव है॥

दोहा।

तव भिक्षुक क्षपणक कह्यो, वंच्यो पापविसाल॥
याहि कपालनिसंगसुख, कहां तुम्हारे भाल ॥ ११८ ॥

चौपाई।

तव भिक्षुक पुन एहु उचारी। क्षपणकको गहुवेगप्यारी ॥
क्षपणकअंग मिली दृगलोले। भये रुमंचसु क्षपणक वोले॥११९

सवैया।

सु अहो सुन श्रावग श्रावगनू सुकपाल निसंग वडो सुखदाई॥
अतिसुंदर देह सनेह वढै, शुहिफेरमिलो भुजदंड लैंचाई ॥
सुन श्रावग सूख महानमयो, यह अंमृतकी सुविरंचि वनाई॥
अव जाइ इकंत रमो तिनसों,इम गूढतिने मनमाहि टराई॥१२०
नपीनपयोधरसोभिन तूं, मृगशावकभीत सुनैन तिहारे ॥
कपाल निजोममसंग रमे, तव श्रावगको डरु नाहि हमारे॥
कपालक आगमधनअहो, जिनभीतर मोक्षसु सूखअपारे ॥
कपालक आज अनाथ तूं, हम दासभये तव पादतुहारे १२१

दोहा।

भैरवके अनुसारने, शिक्षा दीजे मोहि ॥
मैनभ पंथ निहारयो, पूरण पेखे तोहि ॥ १२२ ॥
कह्यो कपालक दोनको, बैठो मो ढिग आइ ॥
तव क्षपणक भिक्षुक तथा, बैठ माल झुकाइ ॥ १२३ ॥
कपालक भांजन हाथलै, बैठो ध्याइध्यान ॥
श्रद्धा तबै कपालनी, ल्याई सुरा महान ॥ १२४ ॥

१) [illegible]

क्षपणक उवाच ॥

सवैया।

बुद्धवाकनते सर्वज्ञ सुबुद्ध जबै, रिजुबुद्धिसु ताहि पछाने ॥
तो सर्वज्ञ सुमोहिलखो जगमें, सबभूत भविष्यत जाने ॥
पितरापितामह सातकुलीलग, तूं मम दासनही ममछाने ॥
सुनके यहबात दिगंबरकी,पुनि भिक्षुक चीत्त बडे खुनसाने६७

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा।

हा पिशाचपापी बडे, मोको कहे सुदास ॥
दंतपंकधर मलन अति, बुरीसुतें तनबास ॥ ६८ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई।

रे विहार दासीके पियारे। यह इक मम दृष्टांत उचारे ॥
कोपनतूं मनभीतर आन। तेरो हित अब करो बखान॥६९॥

दोहा।

बुद्धअनुसासन दूरतज, अर्हतमतो सुधार ॥
मोहि दिगंबरपद लहो, देहु सुवसन उतार ॥ ७० ॥

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई।

हा पापी तूं भयो सुनष्ट । औरन नाशचहें अतिदुष्ट ॥
मनो मशान पिसाचहि आयो। यों तब देख लोक डरपायो७१॥

(१) वेश्याके भर्ता यह हमने दृष्टांत कहाहै ॥

सवैया।

भगवंत महंत वडे जगसंत, सुमैमदसों यह पूर्णकीयो ॥
तव नैन उघार विलोकि भलीविध, आप कपालकसो मद पीयो
कछु शेषरह्यो मदभांजनमें, तिनभिक्षुक और दिगंवरदीयो॥
यह पावन अंमृत पानकरो, सववंध तजो सुखसोंसुतजीयो १२६

तथाच तंत्रे ॥

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा, यावत् पतति न भूतले ॥
उत्थाय च पुनः पीत्वा, पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १ ॥

सवैया।

भवभेषज है पशु पाशकटे, मदपानसु भैरव आप वतायो ॥
इत ते मनमाहिं विचार करें, सुदिगंवर योंमुखमाहिंअलायो॥
हमरे मतमै मदपाननहीं, सुअर्हतगुरुमुहि आप छुडायो ॥
किहभांति कपालक जूठपिवों, मदिराइहभांतिसुभिक्षुकगायो॥
सुकपालक पेख कह्यो श्रद्धे, सुविचारकरें मनमें सकुचाए ॥
अवलौं मति याहि मलीन अहे, पशुभावनहीं इनके सुमिटाए॥
हमरे मुखःसंग सुदोष अपावन, याहि सुरा मनमाहिं ठराए॥
अव तूं मुखआसवपूरणकैं, इन देहु सुराजु इने भ्रम जाए १२७॥
सुसदा शुचि नारिनको मुखहै, इहभांत कहें कवि वेदवीयो॥
श्रद्धा सुकपालक जोरदोऊ कर, नाथ कहो सुवनै अवकीयो॥
मदभांजन ले मुखपानकरे, पुन शेष सुभिक्षुककै कर दीयो॥
मुहिआजप्रसादमहानभयो, इमभाषसुभिक्षुकसोमदपीयो १२८

(१) मूर्खता। (२) अपने मुखमें मदिरा पवित्रकरकै। (३) (स्त्रीमुखं तु सदा शुचिः) ऐसे कहाहै परंतु तहां अपने स्त्रीकामुख शुचिहै यह कथन है परस्त्रीके मुखका निषेध है. पापका जनकहोनेते ॥

लोकअनिंदत जो वड भागी । अपनो राजसूख वहुत्यागी ।
तेरो वेस पिसाच सुजोई । कौनचहे भवभीतर सोई॥ ७२।

दोहा ।

अर्हत नहिं सर्वज्ञथो, धर्म कहे किह सोइ ॥
तो विनश्रद्धा ताहि मत, कहो सुकांको होइ ॥ ७३ ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई ।

ग्रहनक्षत्र सकल सोजाने । चंद्र रविको ग्रहण वखाने ॥
नष्ट लाभ पुन भावीज्ञान । पाछे भई सु करे वखान ॥७४॥
गणनामहि अंतर नहिंरहे । अतीन्द्रियवस्तुज्ञान वहुकहे ॥
तातेंहै सर्वज्ञ अर्हत । ऐसें माने जे जगसंत ॥ ७५ ॥

कवि उवाच ॥

दोहा ।

सुन भिक्षुक अतिशयहँस्यो, भूपति सभामझार ॥
गुलाबसिंहगति औरही, लागो करन उचार ॥ ७६ ॥

भिक्षुक उवाच ॥

चौपाई ।

अनादिकालका ज्योतिपजोई । अतीन्द्रियज्ञान कहेसवकोई ॥
तांपरंतारक तुम जग भये । कष्टव्रत शिरपर धरलये ॥७७॥
और कहों इककरो वखान । तव मतजीवशरीर प्रमाण ॥
विनासंवंध त्रिलोकीज्ञान । ताको किहविध होइसुभान ७८॥

(१) अर्हत तो सर्वज्ञ था नहीं तिसने धर्म किसप्रकार कहा सो कहिये।
(२) वञ्चक। (३) विज्ञानरूप ॥

सुअहे यह आसेव गंधवडी
नहिं वारवधूसंग पानकरे,
सुकपालिनिके मुख गन्धा
सुर सांच सुधा उर चाहते
क्षप

रेभिक्षुक मतपीव
याहि कपालिनि
तव भिक्षुक मद
पीवत प्रसन्न सुहे

सुअहो मदस्वाद मह
चिरवेमुखयासुखते
सुन भिक्षुक मेटग
अवसैनकरों पुन भि

वहु दोन तहां तव
पिख एहु कपालि
अव नाचकरें तव
भिक्षुकरे गुरुसं

कुंभोपहित दीपकहे जोई। यद्यपि शिपा वडीतिह होई॥
ग्रहमें अहे पदार्थ जेते। कवी प्रकाश सके नहिंतेते॥७९॥
ताते अर्हतदर्शनें जोई। उभै सुलोक विरोधी सोई॥
सौगतदर्शन अतिसुखकारे। वहु हम सुंदरनयन निहारे॥८०॥

शांति स्वाच॥

दोहा।

सजनी श्रद्धा नाहिंइहां, चलैं ठौर अब आन॥
करुणा कह्यो सुएवकर, आगे कियो पयान॥ ८१॥
शांतिसु आगे देखकर, वोली वचनउदार॥
सामासद्धांत सुयह खडो, आगे सखीनिहार॥ ८२॥
भवतु तथा करुणाकह्यो, चलैं समीप सुयाहि॥
मतश्रद्धा तह होइ पुन, अवलो पेखीनाहिं॥ ८३॥
तब कपालकरूपधर, सोमसिद्धांत प्रवेश॥
कीनो सभामझार तह, जहकीरतिविरम नरेश॥ ८४॥

सवैया।

नरहाडनकी गल मालधरी, शंवदंतनके श्रुतिकुंडलछाए॥
भुज अंगदहाडनके सुधरे, निशको सुमशाननमाहि वसाए॥
मज्जन छारविषे सुकरे, तनमें, सुमशानकी छार लगाए॥
अतिभीषन आहि अकारवडो, नरमूंडकपाल सुभोजन पाए८५

(१) [illegible]। (२) [illegible] सोहेंवै सो कहिये सोमसिद्धांतकार्य।
(३) मुरदाके॥

सवैया।

संग आउ सुनाचकरें, कहि भिक्षुक ऐंवकरें विगसाए॥
मत नैन सुनाचकरें, थिर्वके पदयों मुखमाहि सुगाए॥
तीनपयोधर चन्दमुखी, मृगनैन कपालिनि तोहि लजाए॥
सहगुलाव लहें गतियों; जिनके उरमें महामोह भ्रमाए१२४

कवि उवाच ॥

सवैया।

के मनमें हरिध्यान नहीं, शुभपंथनते मिटजावहिंगे ॥
संयमनेम असंकरहें, जगभीतर सिद्ध कहावहिंगे ॥
पंथ सनातन माहि कलू, मन वांछत पंथचलावहिंगे ॥
फैलेगो इहभांति कलू शुभसंत अनादर पावहिंगे ॥१२५॥

भिक्षुक उवाच ॥

दोहा।

अद्भुत आगम एहहे, कहे कपालक जोइ ॥
विनकलेश जिह मतविपे, अभिमत सिद्ध सुहोइ॥ १२६॥

कपालक उवाच ॥

दोहा।

क्या अद्भुततातें पिखी, और पिखो अब सोइ॥
वांछित विपय सुभोगिये, बहुर सिद्ध सभहोइ ॥१२७॥

दोहा।

अणमा महिमा आदिजे, अष्टसिद्धि प्रधान ॥
तेसभ यांमतमें लहे, विनाखेद पहिचान ॥ १२८॥

(१) भूमिमें पद स्पर्शनहोतेहैं नाल गिरतेहैं। (२) ये आठसिद्धि महासिद्धि ...सिद्धि कहावतीहैं ॥

कपालक उवाच ॥

दोहा।

योगांजनसों मैं पिखों, जोकछु जगतमझार ॥
भिन्नोऽभिन्न सो ईशते, लीनो जगत निहार ॥ ८६

कवि रुवाच ॥

क्षपणक ताहि विलोकिकर, भिक्षुक कीन उचार।
एहु कपालक वृतीनंर, पूछे ताहि विचार ॥ ८७ ।
क्षपणक भिक्षुक पूछियो, ताहि समीप सुजाइ ॥
कपालकरे नरमूंडधर, हमे सुदेहु वताइ ॥ ८८
हमरे उर संशयभयो, धर्मसुतें मत कौन ॥
तवै कपालक बोलियो, महा अमंगल भौन ॥

कपालक उवाच ॥

कवित्त।

सुन क्षपणक अब तोहिको वखानकरों,
सुनके हमारो धर्म चित्तमाहि धारिये ॥
भालके कपाल यह चरवी विसाललगी,
मांसकी अहूतीगहि पावक सुडारिये ॥
भूसुर कपाल डारमदरा विसाल पुन,
कीजे मुखपान इम वृतको उपारिये ॥
काट नरमुंड हम भैरवसुझुंड भजें,
श्रोणतकी धार पांव भैरवपपारिये ॥ ९०

(१) जगत् परस्पर भिन्नहै ईश्वरसे अभिन्न है ।

वशं आकर्पण मोहणी, और परमाथनिजान ॥
परक्षोभन उच्चाटनं, प्राकृतसिद्ध पछान ॥ १३९ ॥
योगविघन यह तज्ञको, चहें नाहितिहधीर ॥
परअनपंगकंआइहै, अैसो मतो गंभीर ॥ १४० ॥

क्षपणक उवाच ॥

चौपाई।

अलेकवालि यायों मुखगायो। क्षपणक वहुर विचार सुआयो॥
अथवा अले अचालेभाले। अपोंलपलाकम अहे सुथाले १४१

सवैया।

पिख भिक्षुक ताहि हसे मुखमें,सुकपालकके प्रति एहुउचारे॥
मदरा वहुपानकरी तपसी, मतिभूलगई सुभये मतिवारे॥
मुखवाकसु व्याकुल एहुभयो, मदको उनमादसु देहु निवारे॥
सुन भिक्षुक वातकपालकतो, मुखभीतरतेसुतंवूलनिकारे१४२
मुखसींत तंवूलकपालकजो, सुदिगंवरको निजहाथ दयो॥
मदको मद दूरभयो क्षणमें, धरशीस तंवूल चवाइ लयो॥
कर जोर गयो गुरुकेढिगते, मन भीतरसो सवधान भयो॥
गुरु पूरणतें पदकंजलहे, इक पूँछत तोहि संदेशनयो॥१४३॥

(१) वशकहिये मंत्रोषधियोंकरकेंही अन्यको वशकरना १ आकर्षण कहिये [मं]त्रौषधियोंकरकेंही दूसरेको अपने पास खैंचिलेना। २ मोहन कहिये मंत्रोषधियोंकरके [दू]सरेको भ्रांतिकी उत्पत्ति करनी ३ परमाथिन कहियें मंत्रोषधियोंकरके परके मनकी [श]क्तिन्याई मथनकरना अथवा सवन्टज्ञानका नाशकरना ४ प्रक्षोभन कहिये मंत्रोषधियों[कर]के दूसरेके चित्तको विशेष क्षोभकरना ५ उच्चाटनकहिये मंत्रोषधियोंकरके स्वस्थानतें [दू]सरेको भ्रष्टकरना ६ इत्यादिक प्राकृतसिद्धि कहीजातिहैं ॥ योअर्थहै मतांतरहै। (२) अरे कापालिक। (३) अरे आचार्य। (४) भाटे नाम धारे मलकमें [ल]गा धारे तुमारा भाटा कहिये भाट घटाक्रम कहिये पराक्रम ॥

, गहिबेगसु भैरवके मतलयाए ॥
वी, तिम और कहों कछुहैनरपाए॥
गुरुजो तव सेवक चीत लुभाए ॥
, इहसंक वडीगुरुदेहुमिटाए १४४
क उवाच ॥

हा।

ा, सकल वखानो तोहि ॥
, ढील नलागत मोहि ॥ १४५ ॥
पै यक्षनी नारि ॥
, ल्यावों भौनमझार ॥ १४६ ॥
क उवाच ॥

ौपाई।

। कौन गणत मम एहु निहारा ॥
। धर्मपंथ सभ करें विनासा१४७॥
टक उवाच ॥

ौपाई।

। साँच अहै नहिंझूठ वखान्यो॥
। करें विचार भले कछु आज१४८
। क्षपणक कहँ वतावहु आज ॥
। भूप कही गहिल्यावो सोई१४९॥
। दासी सुता कहावहुनारि ॥
।ताको वेग केश गहिल्याऊ१५०॥
। लेकर नीपुन गणन सुलागे ॥
। करुणासखी सुनो दे कान१५१॥

मृगतृष्णा जलहै निहसार । याविधको सागर संसार ।
मूरख ताहिकरे अचमान । केचित ताहि करे मुखपान९०।

दोहा।

करअवगाहनरमे तिह, अरध उरध पुनजाइ ॥
गुलाबसिंह बिनबोध जग, सदा परमदुःखपाइ॥९१।

चौपाई।

अथवा यह चक्रसंसार । महामोह तिह प्रेरनहार
ताको मूल अबोध बिचाऱ्यो । तत्ववोधकर बने निवाऱ्यो ॥९२

दोहा।

ईशअराधन वीजते, उपजे तत्व सुबोध ॥
ताविन और उपाइ नहिं, हम देख्यो अति सोध ॥९३

चौपाई।

पुंनवंत जे करे उपाइ । करें देवता ताहि सहाइ
ऐसे तत्व विवेकी कहें । जनके सर्वसंदेह सुदहें ॥ ९४
विष्णुभक्तिममआयसुकीनी। श्रद्धा आनि मोहि कहिदीनी
कामादिक जीतन उपाइ । करोसितात्र सुवारनलाइ ॥९५
मैभी करो सहाय तथारी । यों हरिभक्ति सुकीन उचारी
वस्तु विचार अहे जगजोई । काम जिने क्षणभीतर सोई॥९६
ताते ताको वेग बुलैये । तांजीतनहित ताहि पठैये
वेत्रवती अब वेगसु जाई । ल्यावो वस्तु विचार बुलाई॥९७

(१) श्लोक—प्रायः सुकृतिनामर्थे देवा यान्ति सहायताम् ॥ अपन्थानं तु गच्छन्तं [सो]दरोपि विमुञ्चति ॥ अर्थ यहः—पुण्यात्मा पुरुषोंके अर्थ देवताभी प्रायःकर सहायताको क[र]तेहैं परंतु कुमार्गगमनकरतेहुए पुरुषको सोदरकहिये साथ उत्पन्नभ्राताभी त्यागकरदेवे है

हतआश सुकरें विचार। मम माताको नाम उचार॥
इकागर सुनो प्यारी। करुणा कह्यो सुभली उचारी१५२

दोहा।

दोनों ठाढी तहां, चीत इकागर धार॥
र गणती क्षपणक तवे, लागो करण उचार॥१५३॥

चौपाई।

ंजल नहिंथल नाहि पहारन। श्रद्धा नांहि सुमाहि पतारन॥
णुभक्तिके संग मिलाइ। वसीमहात्मजनउरजाइ १५४
णा सानंद कीन उचार। भलाभया सजनी सुनीसार॥
रा विष्णुभक्तिके पास। वसे महात्म उरसुखरास१५५
नीकर शांति हर्ष उर भयो। वहुर कपालकवचनअलयो॥
र्मविहीन धर्म पुन जोई। क्षपणक कहो कहा अवसोई॥
णक अंकमालविसतारी। गणतीकर पुन कीन उचारी॥
थल गिर पताल सोनाहीं। अहे महात्मके उरमाहीं१५७
ालकसुनत विखादहि भयो। मोहमहीप कष्ट अतिभयो॥
विष्णुभक्ति है जोई। सभसिद्धिनिकी मूल सुसोई॥
तिसुता श्रद्धाहै जोई। ताहिसमीप वसी अव सोई॥
ाविमुक्त धर्म तह जव हीं। वसेअनर्थ होइ हमतवहीं१५९
कभूपके कार्य जेते। यद्यपि सिद्ध होइगे तेते॥
पि महामोहको काज। करें होइ जेतो कछुआज१६०
लौन वहुतदिन खाए। ताहित मरे जगत जसपाए॥
तें प्राण जाहिं तो जैये। स्वामिकाज वललायसुकेये॥

प्रतिहारी तव वेगसिधाई। देव कह्यो सुकरों अवजाई।
वस्तुविचार संग प्रतिहारी। आई वेगसु सभामझारी॥ ५८॥

वस्तुविचार उवाच॥

छप्पयछन्द॥

विनसुंदरतनु सुंदर पापी मदन दिखाए॥
करे वंचना जगतलोकको नरकि लिजाए॥
अथवा सभदुःखमूल दुष्टमैल्योविचारी॥
महामोह जह अहे जगतमे वडो विकारी॥
पुन जिहविध मोहनिलाज सठ जनउरको भ्रमनाकरे॥
संग मदनमिल दुष्ट यह अव सोप्रकार जनमनधरे॥५९॥

सवैया।

यह कामनि कुंचतहै अलिका, दृगकंजपिखे जन चीत चुराए॥
घन पीन उतंग पयोधरहैं, मुखचन्द मनो सुविरंचि बनाए॥
इहभांति सराहकरे जन मूरख, जांउर तीर अनंग लगाए॥
मलमूत्र सुहाडतुचा पुतली, युवती खलमोह सुयों दरसाए६०॥
वस्तु विचार करे नर जो, तिहको युवती इमदेत दिखाई॥
मलमांसकी चिकडसंग विरंच, सुहाडनकी पुतली सुवनाई॥
मुख थूक सुनाकमे सीढभरी, निसवासर नयनन गीड वहाई॥
दुरगंध मलीन सुनारि मनो, खिरकी यमधाम विरंच लगाई६१

सवैया।

रमणी रमणी नह रंचकहै, गुण औरनके रमणी दरसाए॥
मुक्ताहलहारसुहेमतैंतटंकह, कुंकमचन्दनलेप लगाए॥

(१) रमणी कहिये स्त्री रमणी नह कहिये सुंदर नहीं है किंतु और गुणोंके आरोपमें देखनेमें आतीहै सो गुणकौनहैं। (२) करणफूल॥

अवी पैठे येहोइ नवार ॥
। महात्मजनहु कुपंथ चलावै १६२
ोहा ।
गए अखाडो त्याग ॥
पुन, भापतहै वडभाग ॥ १६३ ॥
।, हताशन आश सुकीन ॥
मव, कहिये सखी प्रवीन ॥१६४॥
। पुन, भई सुअंतरध्यान ॥
त, भयो शुभाशुभ ज्ञान ॥१६५ ॥
दोहा ।
ो, श्रद्धा रक्षा कीन ॥
, होइ सकल अरि खीन ॥ १६६ ॥
गुलाबसिंह विरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके
तृतीयोऽङ्कः समाप्तः ॥ ३ ॥

कपटउपाय तिनोने रचा। (२) हताशन
इये हताशन ॥
शेष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदयनाटक
णिका समाप्ता ॥ ३ ॥



बहु फूलनकी गलमाल धरे, पुन पाट दुकूल शरीर सुहाए ॥
गति मंद हरे मन नारि नही,नरकाऽग्निचंडशिषा चमकाए६२॥
जिह भूषन नारिनके झनकार, सुने मनहेरनको अकुलाए॥
बिनभाग तिसे सुविपत्ति परे,कंनके हितसो पुन कानन जाए॥
मलिनांबर सूपधरे सिरपै, पिठरी पुनश्यामकरे लटकाए॥
निश आवत हेर बजारविषे,कविसिंह गुलाबनकोउ लुभाए६३

दोहा।

पापी काम चंडाल तूं, जो उर करें मलान॥
तों व्याकुल जन होतहै, ऐसे करे बखान॥ ६४॥

सवैया।

यह कामनि मोहि चितारतहै,पुन चन्दमुखी सुअनंद निहारे॥
दृग नीलसरोज सुपीन कुचा, सुआलिंगनके हित उदम धारे॥
सठ कौनचहे तव कौनपिखे, युवती मलहाड सुमांस विकारे॥
सुपुमान अमूरति चेतनजो, तव हेरत मूढ नही तवसारे॥६५॥

मतिहाज्नुवाच॥

सवैया।

इत आवहु हेवडभागसुनो, तव दोन चले पग वेग उठाए॥
इह राजनको अधिराजविवेक, समीप चलो तुम वेर मिटाए॥
तब जाइ समीप विचार कह्यो, जय देवनदेव वडे सुखदाए॥
करुणाकरके इतओर पिखो, यह वस्तुविचार लगे तब पाए६६

(१) शिटाइंच्छ। (२) स्त्री हाडमांसका विकार होनेकर मइ है, जिसमें इच्छादिकधर्मभीनहीं तथापि स्त्रीमें जो पुमान् पुरुष अमूर्तचेतनहै सो तेरेको देखना है रे मूढ तेरेमें सार कछु नहीं यह भावहै॥

ॐ श्रीगणेशायनमः ।

अथ चतुर्थोङ्कप्रारंभः ॥ ४ ॥

दोहा।

पेखत जांतज मोहको, लहे प्रवोध उदार ॥
सीतावर वरकल्पद्रुम, वसे सुचित्तमझार ॥ १ ॥
कीरति वरमा देवकी, आई सभामझार ॥
मैत्री रूप निहारके, मिटे सुनिखल विकार ॥ २ ॥

सवैया ।

ग नीलसरोरुह शोभतहैं, अलिकै कच नील कपोल सुहाई॥
गुखचन्द अनन्द करे उरको, गतिमंद मनोजन चीत चुराई ॥
कटिसूक्ष्म पीन नितंव कुचा, दृग लाजवडी निरखै सुखदाई ॥
कविसिंह गुलाव निहार सभा, नृपकीरति वरंमाकी विगसाई ३

मैत्र्युवाच ॥

चौपाई।

दैतां मोप्रति कीन वखान । मैं सुनियो सजनी निज कान॥
भैरवी धरणिगिराई । श्रद्धा विष्णुभक्तिसु वचाई॥ ४॥
उत्कंठा चीतमझारी । किहविध पेखो सखी पियारी ॥
मैत्री भाष्यो जवहीं । प्रवेशकीयो श्रद्धातिह तवहीं॥५॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

मे दर मै अतिडर भयो, कँपत मोहि शरीर ॥
[illegible] ॥ ६ ॥

सवैया।

कह्यो यहठौर निवास,करो श्रम आपन दूर निवारो॥
...ार सुवैठगयो, पुन जोर दोऊकर कीन उचारो॥
...करदेव समीपअयो, करुणाकरके कछु आय सुधारो॥
...क कह्यो महामोहके संग, सुहोवतहै जगजंग हमारो ६७॥

सवैया।

...ली सुपताकनमै, प्रथमै सिरदार सुकाम वनायो॥
...तिवीर सुसैननमै, हमरे मनमै इक तूं जग आयो॥
...धंनविचारकह्यो मुखते,भट कोटिनमै प्रभु मोहि बुलायो॥
...करों सभखंड मनो जह, जंबुकपुंज सुखाइ अघायो ६८॥

राजोवाच॥

दोहा।

वस्तुविचार उदार, अति शस्त्रविद्या कौन॥
जांकर हने मनोज रण, मोहि वतावो तौन॥ ६९॥

विस्तुविचार उवाच॥

दोहा।

अहो पंचसर हाथमै, फूलनको धनु आहि॥
तांजीतनहित शस्त्रकी, ग्रहण अपेक्षा नाहि॥ ७०॥

सवैया।

गढ देह मनोजके द्वारजिते, दृढ रोक करों तिह व्याकुल भारी॥
निजराखनहेत चिते अवला पुन, दूरहितेजु पिखे वहुनारी॥
तव मै परिणामसुदूषकहों, मलमूतभरीसु दिखावहु सारी॥
इहभांति मनोजकरों वलखीण, सुलेवहुतां क्षणभीतर मारी ७१

(१) शरीररूपकिल्हेके भीतर कामके आनेजानेकेलिये इंद्रियरूपी द्वार है।

वैया।

नरमूंड कपालन कुंडल पाए ॥
दृगपेखनते जनु ज्वाल बमोए ॥
ा, तिनभीतर दीरघजीभ हलाए॥
जनु नैन पिखो इमचीत डराए ७॥

ोहा।

र, लागी करन बखान ॥
भई, होवत ना कछु भान ॥ ८ ॥

ौपाई।

। संभ्रमरिदेसुभई　दुःखारी ॥
। कछु मनभीतर करत विचारा ९॥
। लखै नमोहि नशुद्ध सुकाई ॥
। पूछो जाहि संदेह मिटाऊ ॥ १० ॥

न्युवाच ॥

दोहा।

कहागयो मन तोहि ॥
नाहिनिहारत मोहि ॥ ११ ॥
पुन, लांबो लीन श्वास॥
आउ हमारे पास ॥ १२ ॥

। (२) [illegible]

दोहा।

साधुसाधु भूपति कह्यो, वोल्यो वहुर विचार ॥
जिहविध जीतों कामअरि, राजन सुनो प्रकार ॥ ७२ ॥

सवैया।

पावनहै सरिता जगमै, घन कानन तीरविपे अतिछाए ॥
कोमल सैल सिलातल है, गिरिवास इकंत महासुख दाए ॥
जोसमवाक व्यासकथा, सत्संगतिभाग वडे जनपाए ॥
तौकहि नारि मलीनहरे मन, और मनोज कहा उपजाए॥७३॥
कामको आयुध एक प्रधान,इहै अवला जगभीतर गायो ॥
ताहि जिते पुन कामसहायक, उदम होवहिगो त्रिफलायो ॥
भंग करों जव कामसहायक, तौ यह प्राणतजे दुखदायो ॥
कामसहायक जे जगमै, तिहनाम कहों सुसुनो मनलायो॥७४॥
चन्द सुचन्दन धौलखिपा, मधुपावली गुंजतफूल सुहाई ॥
वागवसंत मयूर पिको पुन, श्यामघटा घन घोर लगाई ॥
मंद सुगंध कदंव प्रभंजन, और शृङ्गारजु कामसहाई ॥
नारि जिती तव जीतलए, सभ नाहिपिखों इनमैवलराई॥७५॥

दोहा।

अति विलंव नकीजिये, सुनो जगतके राय ॥
आयसु मोको दीजिये, हनो काम रण जाय ॥ ७६ ॥

सवैया।

सार असार विचार सिलीमुख, मैसुदशो दिशमाहि पसारे ॥
सैन मथौं अरिमंडलकी, सुवने प्रभुके अव कारज सारे ॥

(१) व्यासप्रगीत शांतिके प्रतिपादिक वाक्यहै तथा सत्सङ्गति। (२) रात्रि।

चौपाई।

कालनिशा सम वदन कराला। मैं ताभीतर असी विहाला ॥
याहि जनमविपे पुनप्यारी। तोहिपिप्योममभाग उदारी १३॥
मैत्री सखीसु अंग मिलीजे। मेरे दुख दूर सभ कीजे ॥
तव मैत्री पुन अंग मिलानी। श्रद्धा लाइ गले विगसानी॥१४॥

मैत्र्युवाच ॥

चौपाई।

महाचोर दरशन है जाहि। विष्णुभक्ति पुन डाट्यो ताहि ॥
महाभैरवी विपति मलीन। कहो सखी तिन करम सुकीन॥१५॥

श्रद्धोवाच ॥

सुनसजनी मै करों वखान। जैसे वाजपरे वलवान ॥
एकहाथमै कच गहिलीने। दूसर धर्मगह्यो दुःख दीने॥१६॥
लेकरदोनो गगन उडानी। मनो गीझ लेमांस पलानी ॥
मैत्री सुन उरमाहि डराई। हा धृग हा धृग मुखो अलाई १७॥
भई मूरछा तनमै भारी। श्रद्धा वहुरों कीन उचारी ॥
सखीप्यारी डरु नहि करो। तुम नीके उर धीरज धरो॥१८॥
मैत्री तवै धीर उर धार। श्रद्धे सखी सुकरो उचार ॥
श्रद्धा वहुरों कीन वखान। सुनो सखी नीके देकान॥१९॥
मैअतिआरत दीन पुकारी। विष्णुभक्ति उर दया सुधारी ॥
टेढीदृष्टि निहाऱ्यो जवहीं। गिरी भैरवी धरमे तवहीं॥२०॥
वज्रपातजिम शैल गिराई। जरजरअंग गिरी तिमआई ॥
विष्णुभक्ति उर वसे हमारे। गुलाबसिंह सेवक प्रतिपारे॥२१॥

(१) एकहाथसे मेरेको केशोंसे गहिलिया। (२) दूसरे हाथसे निष्कामधर्मको॥

विमंथ्यसखा हरिके, जिम सिन्धुंपती रणभीतर मारे ॥
लंक हनोतिमही, प्रभु आयसुदेहुनलाइ सुवारे ॥ ७७ ॥

सवैया ।

रिरमे अपवाद घनो, सिर दंडसहे यमलोक गहेगो ॥
नारिमिले अनुकूल कहां, कछुदोप सुने उरमाहि दहेगो ॥
पूत महादुख चीतदहे, खलपूतभये भवधार वहेगो ॥
जे दुहिता घरमाहि घनी, धंननाहिमिले दुख लाज गहेगो ॥
वेध नारिनको सुखजो, क्षणएक भजे दुःख देवत भारी ॥
रन संगमते जन मूरख, घोरसंसार वहे वहु वारी ॥
हि तिनको कछु पाइ विवेकजु, प्रीतिकरें पुन नारमझारी ॥
विसिंह गुलावनहीनरते जग, साचकहों वहु नारि विगारी ७९
न भूप विवेक प्रसन्नभयो, मुख भीतर यों तिन कीन उचारी ॥
टका कटिभीतर खैंच कसो, सभ आयुध वीर सुलेहु सभारी ॥
व शत्रु सुजीतनहेतु चढो, सुकरे शिव आप सहाय तयारी ॥
स्तुविचार कह्यो जिम आयसु दुंदभवाइचढे वलधारी ॥ ८० ॥
नव भूपति फेर विचारकह्यो, सुन वेत्रवती सुभले मनलाए ॥
अव क्रोधके जीतनहेतु सुपावन, एक क्षमा तुम लेहु वुलाए ॥
प्रतिहारनि फेरकह्यो विनवेर, करों प्रभुजो मुखमाहिं अलाए ॥
हुजाइ सिताव अई क्षणमै, सुक्षमा पुनआपनसाथ लवाए ॥ ८१ ॥

सवैया ।

अतिसुंदर चीतगंभीर वडी, दृगलाजभरे घर ओर निहारे ॥
इहभांति लसे मुखमंडलतां, नभकातक चन्दकला सभ धारे ॥

(१) अर्जुन । (२) जयद्रथ । (३) कन्या । (४) दुग्ध ॥

मैत्र्युवाच ॥

दोहा ।

। सखी,आज निहारियो तोहि ॥
लेमुख, छुटी वहुर कहुमोहि ॥ २२ ॥

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई ।

ारी । भई क्रोधमुख एहु उचारी ॥
जोई । हनो समूल रहे नहि सोई ॥२३॥
राई । श्रद्धा केशनते सुफराई ॥
ान। श्रद्धे वेगसु करो पियान ॥२४॥
ाई । काम क्रोध मोह दुखदाई ॥
लाइ। हुइ वैरागसु तोहि सहाइ ॥२५॥

दोहा ।

ामिल, मैं आवों ततकाल ॥
सैनपर, करो सुजंग विसाल ॥ २६ ॥

चौपाई ।

ती । शमदमादि सगली मिलतेती ॥
ाए । कव विवेकउपनिपत मिलाए२७॥

दोहा ।

पत संग, मिल विवेकसुत मोर ॥
वोधसुत, होवेगो ग्रह तोर ॥ २८ ॥

) महाभैरवीसे मेरा तिरस्कार करायाहै । (३) (क्रतं
ा मज्ञा) अर्थयह–कनकहिये सत्य अर्थकूं जो धारणक-
ंभरा मज्ञाहै ॥

अतिपावन दीरघ हेर कविजन, सिंच सुधा उरताप निवारे ॥
भांतिक्षमासभलोकपिखी, अवआपक्षमा मुखमाहि उचारे८२

क्षमोवाच ॥

कवित्त।

क्रोध अंधकारके विकार उर भये अति,
भ्रुकुटी चढाइ खल फीके मुख वोलई ॥
नैनकरे लाल सुविसाल होठ डसे अति,
जरे अंगअंग सुभुजंग विषघोलई ॥
धीर जे गंभीरनीर सागरसमान अति,
भजे न विकार नहि रंच उर डोलई ॥
क्षमावंत संत भगवंतके महंत जन,
वोले मधुवेन जन अमी झकझोलई ॥ ८३ ॥
खेद न जवानको न शीसको महानदुःख,
चित्तको न ताप नहि देह दुःख पाइहै ॥
हिंसादिदोष विन क्रोधको निफोर्ट हनो,
क्षमा मेरो नाम जग मेरो जस गाइहै ॥
ऐसेतु अलाइ पुन दोनहीं समीपजाइ,
कहे प्रतिहारी क्षमा और समुझाइहै ॥
यही देवदेव सुविवेक भूप भारी अति,
चालिये समीप सखी पेखि हरपाइहै ॥ ८४ ॥

दोहा।

क्षमा समीप सुजाइ पुन, जयजय देव उचार ॥
यह दासी आई क्षमा, वन्दों पाद तिहार ॥ ८५ ॥

(१) अत्यन्त ॥

चौपाई।

मैत्रीमैं विवेक ढिगजाऊ। विष्णुभक्ति संदेश सुनाऊ ॥
वासर तूं किहभांति विताए। कौनकौन आचरन कमाए ॥२९॥

मैत्र्युवाच ॥

दोहा।

विष्णुभक्तिकीआज्ञया, चार वहिन हम नीत ॥
विवेक काजके सिद्धहित, वसें महात्म चीत ॥ ३० ॥

चौपाई।

महात्मजन जगभीतर जेते। याविध वर तें सगले तेते ॥
सुखियनमैं जनमें उरधरें। दुःखियनमैं करुणा उरकरें ३१॥
पुंनवंतमै मुदिता धरें। दुष्टनमाहि उपेक्षा करें ॥
योंकर रागद्वेष कलपाई। मिटे निजात्मकी सुमलाई ॥ ३२ ॥

दोहा।

मैत्री करुणा मुदिता, और उपेक्षा जान ॥
चार[१] वहिन हम जीवकी, करें सकल मलहान ॥ ३३ ॥
चली प्यारी सखी तूं, महाराजके पास ॥
कहां निहारे भूपको, मोहि करो प्रकास ॥ ३४ ॥

---

(१) तथाच सूत्रं (मैत्री करुणा मुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्याऽपुण्यविषयाणां भावनातः चित्तप्रसादनम्) अर्थयह—सुखी दुःखी पुण्यात्मा पापात्मा पुरुषोंविषयक यथाक्रमसे मित्रता दया मुदिता उपेक्षा इनधर्मोंकी भावनाके अनुष्ठानसे चित्तको प्रसन्नकहिये निर्मलकरे अर्थात् जे पुरुषसुखीहैं तिनमें मैत्रीकी भावना करे जे दुःखीहैं उनपर कृपाकी भावना करे जे पुण्यशीलप्राणी हैं उनमें मुदिताकी भावनाकरे जे पापाचारहैं उनमें उपेक्षाकी भावनाकरें अर्थात् उनके सङ्गउदासीनभावसें वर्तें, इस प्रकार धर्मोंकी भावनासें (चिन्तनसें) चित्तके रागद्वेषादिक मल दूरहोवे हैं इति ॥

सवैया।

सुक्षमा इहठौर निवासकरो पुन, बैठ क्षमा यह बात प्रकासी॥
प्रभु आयसु देहु विलंबकहा, जिहहेतु बुलाइलई यह दासी॥
सुक्षमे यह संगरमाहि दुरात्म, क्रोध बडो सुभपंथ विनासी॥
भट औरनको सुखजोरतहै, सुक्षमे अबताहि करोतुम नासी ८६

क्षमोवाच॥

दोहा।

देव अनुग्रह पाइ तव, महामोह रणनास॥
मै सुकरो क्षण एकमे, कहा क्रोध तिह दास॥ ८७॥

सवैया।

इह बेदन पाठ सुयज्ञतपो पुन, और जिते नर पुंन सवारे॥
विनकारण वैरकरे दुष्टात्म, क्रोध सभो शुभपंथ निवारे॥
सम लोह सुदेह तपावतहै पुन, नैननते जन आगि निकारे॥
तिह क्रोधको मै इहभांति हनो, दुरगा महिषासुरज्यों रणमारे८८

दोहा।

वहुर विवेक वखानियो, क्षमे सुने हम कान॥
जांउपाय क्रोधहि जने, वहु मम प्रगट वखान॥ ८९॥

सवैया।

सुक्षमा कहि देव सुनो मनमे, नर क्रोधकरे तव मौन गहीजे॥
वहि गारिवके मुखभीतरजो, पुन तांप्रति कोमलवाकभनीजे॥
जुधिकारकरे परे तिहपांइ आपद, पेख महा करुणा उरकीजे॥
तनताडनमे हरपे उरमे, क्रतपूर्वपाप सुमेअब खीजे॥ ९०॥

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई।

विष्णुभक्ति देवीहैं जोई। कहीठौर सुनिये अव सोई ॥
राढा नाम देश इक गाए। महापुनीत जहां वनछाये ॥३५॥

दोहा।

तिह उत्तरतट गंगके, चक्रतीरथ महान ॥
मनो विधाता गंगश्रुत, रचे तटंक सुजान ॥ ३६ ॥

चौपाई।

तहां विवेक वसे वडभागी। मीमांसामें जिनकी मतिलागी ॥
किवेंकिवें धारे निजप्राना। भये व्याकुलचीत महाना ॥ ३७ ॥
धमनी व्याप्ततां तनुभयो। उपनिषत संगहित तप निरमयो ॥
परशुरामसम धार सुटेक। करे तपस्या तहां विवेक ॥ ३८ ॥

दोहा।

कह मैत्री अव जाहि तूं, श्रद्धे वेर नहोइ ॥
विष्णुभक्ति जो मम कह्यो, कर नियोगहै सोइ ॥ ३९ ॥
इमकहि दोनो चली तव, श्रद्धामैत्री जान ॥
अपने अपने पंथमें, वन्दनकर भगवान ॥ ४० ॥

चौपाई।

श्रद्धा जायविवेक निहारा। धमनी व्याप्ततांतनुसारा ॥
तातजीत अरिमुखो अलायो। पिख विवेक पदमोलझुकायो४१
श्रद्धा कर गहि लयो उठाइ। पूछो कुशलनैन जलजाइ ॥
विष्णुभक्ति सुख कीनवखान। सुनोपूत नीके दे कान ॥ ४२ ॥

(१) करणफूल। (२) नाडी ॥

:हभांति विचारकरे निसवासर, ताहि सुक्रोध नहीं उपजाए॥
ख भूप शवासकही सुखते, सुक्षमे तव भाख्यो साच उपाए ॥
पुन देव जिते जब क्रोध वली, तव हिंसन पारुप मान वसाए॥
भ जीतलए नहिं फेरलरें, इनकी भुज ना वल देतादिखाए॥९१॥

दोहा ।

कह्यो विवेक प्यानकर, रणमे शत्रु संहार ॥
सात्विक संपति देवियां, करें सहाय तथार ॥ ९२ ॥
क्षमा सुआयसु सीसधर, गई सुशंखवजाइ ॥
राजा प्रतिहारी कह्यो, लेहु संतोष वुलाइ ॥ ९३ ॥
महामोहभट लोभजो, ताको मारे सोइ ॥
तांविन प्रतिहारी सुनो, और उपाव न कोइ ॥ ९४ ॥
जो आयसु सोईकरों, प्रतिहारी इम जाइ ॥
ले संतोपको संग पुन, कीन प्रवेश सुआइ ॥ ९५ ॥
चित्त चितार सन्तोप पुन, दयारसीले नैन ॥
गुलावसिंह वहुवोलियो, सुनो ताहिके वैन ॥ ९६ ॥

सन्तोष उवाच ॥

सवैया ।

फल काननमांहि अनेक मिलें,विनखेद सदा तरुहैं सुखदाई॥
पुन नीर जहांतहं पूर रह्यो, अतिशीतल पुंन नदी मधुराई ॥
मृदुसुंदर पल्लवसेज बने, विजनावन आप समीर झुलाई ॥
जन हा धनवंतनद्वारनमे, कृपण पुन खेद सहें वहु जाई ॥९७॥

(१) हिंसा, कठोरवचन वा कटुवचन मान वा प्रभुता अधीन होवेहै ॥

कामक्रोध पुन मोह अराती। करो पूत इनको तुम घाते
सुन विवेक मुख एहु उचारी। हनो अरातिसहायतुमारी॥४
याअवसर इक मंत्री आयो। नामसुबुद्धि रूप मन भाये
मंत्री आइ सुवन्दन कीनो। भूपविवेकसु आदर दीनो४
समाचार सभ भूप सुनायो। सुन मंत्री मनमें हरपायो
देव करो तुम वेग उपाइ। जीते निखल अरातीजाइ४

दोहा।

सभामाहि उरहरप अति, अए विवेकसुराय॥
जा पदकंज प्रतापते, निखल शोक मिटिजाइ॥ ४६

सवैया।

सूर्यसों तनु शोभतहै, भुजदंड मनो ब्रह्मंड दवाए॥
नैन सरोज मनोज हने, सुप्रताप दशोंदिशमे चमकाए॥
धरणीसम धैर्यहै उरमै, मुखमैघनश्रावणसों गरजाए॥
भूप निहारसमेतसभा, कविसिंह गुलाव वडे हरपाए॥४७॥

राजोवाच॥

दोहा।

हापापी महामोह शठ, हने महांजन तोहि॥
मै तेंप्राण निकारहों, विष्णुभक्ति कहि मोहि॥ ४८॥

चौपाई।

शांति अनंतमहिमा उजागर। चिदानंद अंमृत सुखसागर॥
मगनभयो तामे इकवारा। वहुनरचहे न सुखसंसारा॥४९॥

(१) विष्णुभक्तिका॥

न मूरख ना मम चीतधरें, अतिमोहभये सठ देह तपाए ॥
हुवार अरंभ भये भगना, जग फेर करे पशु नाहिं लजाए ॥
नमकालरनीरभ्रमे हरणा, इतते उत मूरख त्यों जगधाए ॥
न मोहिप्रसादन आशमिटे, हतवज्रसमान घनो विललाए९८

कवित्त।

लोभ अंधकार दग याविध विकारभजे,
पांउ धन और कछु एतो अब पायोहै ॥
एतो थाप रापों एतो व्याजमे चलाऊं आगे,
मे पिता पितामेपुन याविध वढायोहै ॥
ऐसै धनध्यानकरे कालकी नसारपरे,
आश सुपिसाची पुन याविध ग्रसायोहै ॥
विनही सन्तोप जग लहे घनो दोप पुन,
गहे काल मूंड जाने लोक सुख पायोहै ॥ ९९ ॥

सवैया।

न एक उपाइकरै नलहें, पुन एक वडे सुउपाइ मिलाए ॥
मिलाइ धरे धनभौन विपे, विनभाग सुभोगविना विनसाए॥
त्य वियोग उभै धनकोघर, आइगयो वहु चित्त तपाए॥
जगमाहि सन्तोप विना,कवि सिंहगुलावनको तृष्णाए१००॥
श सुधौल भये शिरके, सुजरा जगसापिन डंक लगाए॥
पिमूढ चहे धनको, सुख हेतु कवीनहि रामको ध्याए ॥

( ) संयोग वियोग ॥

वोधसुनीर अवोधजनी रज, लोभ भले जगमाहि मिटाए॥
सन्तोप रसामृत सिंधुविपे पुन, देहुवकी सुख पूरणपाए १०१॥

प्रतिहार्युवाच ॥

दोहा।

एहु स्वामी भूपहे, चलो सुयाके पास ॥
जाय सन्तोप समीप पुन, जयजय कीन प्रकास १०२॥
इहु सन्तोप प्रणाम प्रभु, करे सुचरण तिहार ॥
भूपति कह्यो समीप इह, वैठो आउ हमार ॥ १०३ ॥

कवि रुवाच ॥

वरनो रूपसन्तोपको, वैठो सभामझार ॥
सीतावर वर मैं चहों, वसो सुचित्तमझार ॥ १०४ ॥

सवैया।

चित गंभीर मनोनिधि नीर, शरीर महाद्युति सोहतहै ॥
दृग सिंच सुधारस शांतिकरे, इहभांति चहूंदिश जोहतहे ॥
निज दोरदले अरिमंडलको, भवमंडलमें यश सोहतहै ॥
कविसिंहगुलाव पिखे इहभांति, मनो सभके मन मोहतहै १०५

दोहा।

वहुर सन्तोप वखान्यो, आज्ञा देहु सुमोहि ॥
भूपति कह्यो प्रसंग सभ, नाहि सुछानोतोहि ॥ १०६॥
वेगवनारस जाहुअव, लोभहनो वलधार ॥
कह्यो सन्तोप सुकरोअव, जो प्रभुकरो उचार॥ १०७॥

(१) ज्ञानरूपी जलकरके अज्ञान बहुललोभकर उत्पन्न रजोगुणको धोयकर ॥

करी वन्दना ठौरनीके निहारी ॥
इही विष्णुभक्ति जनं मोक्षकारी ॥
मिली शांतिसंगं कछू सोविचारे ॥
चलों यासमीपं कहों सर्वसारे ॥ ११ ॥

दोहा ।

विष्णुभक्ति अरु शांति पुन, वरीसभामहि आइ ॥
विष्णुभक्तिको कहेगी, शांतिसुकछु सुनाइ ॥ १२ ॥

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

देवी तोकों मे पिखों, चिंताकुल उरमाहि ॥
विष्णुभक्ति मोको कहो, कौनहेतु मनमाहि ॥ १३ ॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

सवैया ।

वत्से सुवनारसमांहि महारण होवत मोहविवेकहिकेरो ॥
जिहठौर सुवीर अनेकमरे सुमनो यमराजकरे सुनिवेरो ॥
तहि मोहवलीसहि वालविवेक भिरे रणमें बहुभांति घनेरो ॥
नहिजानत तांगति कौनभई इहकारणते उर कंपत मेरो ॥१४॥

दोहा ।

कह्यो शांतिकहचिंतहे, तोहिकृपा जबहोइ ॥
तब विवेक जीते सही, मे जानो यहलोइ ॥ १५ ॥

(१) वृत्तान्त । (२) इंद्रियनिग्रहका नाम शांति है । (३) जडाऽनृतादंकाप दिर्षोसें रहित सत्यज्ञानानन्दाऽऽत्मस्वरूपेननकूं विषयकरनेवाली जाअन्तः करणकी वृत्ति है ताकानाम विष्णुभक्ति है ॥

सवैया।

मानव देव सुदैतसभै, जिह जीतलए जगभीतर सारे ॥
तापसमंडल विप्र हने, वहुभांतिनके पद संगल डारे ॥
तां खललोभको मैं इहभांति, हनो पुन संगर भूमिमझारे ॥
दाशरथीरघुवीरवलीजिह, भांतिसुरावणराक्षसमारे ॥ १०८॥

चौपाई।

ऐस वखान सन्तोप सुगयो। और एक नर आवत भयो ॥
देव विजयहित मंगलजेते। सभैमिलाइ लियाए तेते ॥ १०९॥

दोहा।

तरुण ज्योतिपि आइ कर, कहे महूरत सार॥
प्रस्थान भले अव कीजिये, विजयमहूरत धार॥११०॥
भूपति पुरुप वखान्यो, सेनापती बुलाइ ॥
कहु प्रस्थान अव कीजिये, शिवसुतपाद मनाइ१११॥
कहो सारथी जाइ अव, संग्रामक रथ आन ॥
कृतमंगल रथ वैठकर, वेग सुकरें पयान ॥ ११२॥

सवैया।

भूपकि आयसु जाइकही, सरदारनसों नहवेर लगाई ॥
सूत स्यंदन वेगअने रथ, भूपचढे सुगणेश मनाई ॥
ताहिसमै सरदार सभैचढ, वाहनसेन अशेप चलाई ॥
धुनिदुंदभकीजरजह्नभयो, सुप्रलैघनजानगरजेनभआई११३
मत्तगयंदन कोर सजी, भ्रमरावलीगंडनमाहि सुहाई ॥
जान सपक्ष चले गिरिपुंज सुवेग वडो अवनी गजआई ॥

(१) [illegible] । (२) [illegible] ॥

यद्यपि यों सुविचारकरों, पुन तदपि शोक विवेक दवाए ॥
दीरघ शोककी ज्वाल वढे, विवहा उर अंतर मोहि जलाए॥
यद्यपि क्ररस्वभावहुते, मम भ्रात चले कुपंथनमाही ॥
काम सुक्रोध तथा मदमान मुए सगले रणमंडल माही॥
तदपि दुःख कटे उरको, अरु देह सुकावत मैं जगमाही ॥
शोक दवानलज्वाल लगी मम अंतरआत्मकाननमाही ॥६॥

चौपाई

करकै मनकेमाहि विचार । श्रद्धा वहुरों कीन उचार ॥
विष्णुभक्ति उर परमदयाल । एसो मोप्रति कह्यो विसाल॥७॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

शंकरछन्द ।

इहठौर संगर होइगो भट करेंगे कुलनास ॥
मैंहरसाकों पापनहि मनमोहि भयो उदास ॥
अव छोडिके वनारसी मैं सालग्रामसु जांउ॥
भगवानके स्थान वसकर काल ताहि वितांउ ॥ ८ ॥

दोहा ।

श्रद्धे युध वृरतांत सभ, करीनिवेदन आइ ॥
सो मै सगलो ताहिढिग, करों निवेदन जाइ ॥ ९ ॥

भुजंगप्रयातछन्द ।

तहांविगश्रद्धासुनीकेसिधाई ॥
पिखेतीरथं गंडकापावनाई ॥
जहां आप देवो सदा वास धारे ॥
ससंसारसिधुं जनं पारतारे ॥ १० ॥

कांचनके झुलंवार लसें, गजश्याम भली उपमा मनआई ॥
दामनिपुंज सुसंगमनो, निस भादवकी घटहैं उमडाई ११४॥
श्वेतवरूथ सुऊच वडे, घनसारदसें रथपुंज सुहाए ॥
वेग प्रभंजन जीत तजे, इहभांति तुरंगम स्यन्दन लाए ॥
ते रणरंगमही अति धावत, ता उपमा कवि कौन वताए ॥
धावनमें मन एक वली, कविसिंहगुलाव सुहेर लजाए११५॥

सवैया।

पेदलके वहु पुंज चले, रणमे सभके उमगे मनहे ॥
फैटनमे यमदाड कसी, सणखोलसंजोह सजे तनहे ॥
कुंतं सुदीरवहै करमे सुगुलाव कछू उपमा भनहे ॥
जान दिगंतर भूरखिरे, यह नीलसरो जनके वनहें॥ ११६॥
कोटन कोट सुवीर वली पुन, मांहि तुरंग अरूढ भयेहे ॥
मानहु भूमिनपाइ छुहे, नभमें हरिवाहन कोटिथएहे ॥
थर थल्लभयो दिगमंडलमें, कर वीजुछटा करवार लएहे ॥
यों चतुरंगन सैन चली, सभके तनमे अति रूप नएहे ११७
मध्यविराजत भूपतिको रथ, मानहु मेरुइसो चमकाए ॥
वाजिं खुरागर चूंवत भूमि, सुले रथमाहि अकाश उडाए ॥
योंधुनि होवतहै रथकी जनु, खीरनिधी हरि फेर मथाए ॥
धूरिकीपुंज अकाशचढे, पथऊर्ध्वहै रवि मंडल छाए॥११८॥

(१) झूल। (२) उच्छाह। (३) शरदऋतुके वादलसें। (४) प्यादोंके। (५) कटिवस्त्रमें कटारी वसीहै। (६) जेरसहित कवच। (७) नेजा। (८) दिशाओंके अंतर॥

करी वन्दना ठौरनीकि निहारी ॥
इही विष्णुभक्ति जनं मोक्षकारी ॥
मिली शांतिसंगं कछू सोविचारे ॥
चलों यासमीपं कहों सर्वसारे ॥ ११ ॥

दोहा ।

विष्णुभक्ति अरु शांति पुन, वरीसभामहि आइ ॥
विष्णुभक्तिको कहेगी, शांतिसुकछु सुनाइ ॥ १२ ॥

शांति उवाच ॥

दोहा ।

देवी तोकों मे पिखों, चिंताकुल उरमाहि ॥
विष्णुभक्ति मोको कहो, कौनहेतु मनमाहि ॥ १३ ॥

विष्णुभक्ति उवाच ॥

सवैया ।

वत्से सुवनारसमांहि महारण होवत मोहविवेकहिकेरो ॥
जिहठौर सुवीर अनेकमरे सुमनो यमराजकरे सुनिवेरो ॥
तहि मोहवलीसहि बालविवेक भिरे रणमें बहुभांति घनेरो ॥
नहिजानत तांगति कौनभई इहकारणते उर कंपत मेरो ॥१४॥

दोहा ।

कह्यो शांतिकहचिंतहे, तोहिकृपा जबहोइ ॥
तव विवेक जीते सही, मे जानो यहलोइ ॥ १५ ॥

---

(१) वृतान्त । (२) इंद्रियनिग्रहका नाम शांति है । (३) जडाऽनृताहंकारादिकोंसे रहित सत्यज्ञानानन्दाऽकारसत्यरूप्चेतनकूं विषयकरनेवाली जाअन्तः करणकी वृत्ति है ताकानाम विष्णुभक्ति है ॥

सूत उवाच ॥

कवित्त ।

राजनके राई मुनजीकआई एहु पिखो,
शिवकी बनारस सुदेत यों दिखाई है ॥
नीरयंत्रधार सुफुहारे जहँ अपार छुटे,
पावनी बनारसकी भूमि सुसुहाई है ॥
सौधनके शीश जन रचे जगदीश तह,
कांचन बनाइ लिपलेप चमकाई है ॥
जाहिकी अपार छवि हेर छवि छीनभई,
कहि सुगुलाबचन्द किरणन लजाईहै ॥ ११९ ॥

सवैया ।

धौल पिखो ग्रह ऊच बने, जनुसारदमेघनपुंज सुहाए ॥
बीच पताक सुऊच लसे, मुमनो तडतागनकै चमकाए ॥
है मुकेलाकृत बारजपुंज, सुगुंजततां मधुपावलि आए ॥
गंधकरें उदगार मुखो, मकरंदभयो झडसूर छपाए ॥ १२० ॥
फूल खिरे सुचुफेर पिखो, यह पावन भूमिसमीप सुहाई ॥
एहु पिखो घन छाइ मही, तरुपुंज किधो घटहै उमडाई ॥
मारुत जाइ सुठौरविषे, जन पूजत शंभुप्रेम बढाई ॥
गाँवत फूल चढावतहै सुनिवावत वन्दत शीश निवाई॥१२१॥

(१) मन्दिरोंके शिखर। (२) सुफेद। (३) मुक्तामाणिके किये। (४) वायुके न्धकर जो वृक्षोंका शब्द है तिसशब्दकर वायु मानो गावत कहिये शिवका जाप है और अपने आपसें जो वृक्षोंसें फूल गिरतेहैं सोई मानो शिवजीको वायु फूल वताहै औ निवावन कहिये वृक्षोंको अपने वटसें वायु भूमिमें स्पर्श करावेहै तिस नेकर मानो शिवजीको वायु वन्दना करेहै ॥

दोहा।

द्यपि वत्से ऐंवहे, संतनको कल्यान ॥
तौपतहै अनुमानते, तदपि संक महान ॥ १६ ॥
अवलौ श्रद्धा नहिअई, समाचारले पाहि ॥
यांते पुत्री मनविपे, वड़ो संदेह सुआहि ॥ १७ ॥
ताहिसमे श्रद्धा अई, लागी करन उचार ॥
विष्णुभक्ति मोकोमिलो, पुत्री भुजापसार ॥ १८ ॥
विष्णुभक्ति श्रद्धा कह्यो, सुखसों आई माइ ॥
श्रद्धा कह्यो प्रसाद तव, कह कलेश जनपाइ ॥ १९ ॥
कह्यो शांति कर जोरके, अंव नमो पद थार ॥
श्रद्धा कह्यो सुगलमिलो, पुत्री भुजापसार ॥ २० ॥
शांति मिली गलमें तवे, भयो अनंदवृतांत ॥
विष्णुभक्ति वोली तवे, श्रद्धे कहहु वृतांत ॥ २१ ॥
देवीतेंप्रतिकूलको, जोकछु लायकहाइ ॥
सोवृतांत उहांभयो, और नजानो कोइ ॥ २२ ॥
विष्णुभक्ति पुन तिहकह्यो, मोकोकहि विसतार ॥
गुलावसिंह श्रद्धा तहां, लागी करन उचार ॥ २३ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सवैया।

भागवती सुनतूंजवही, तह केशवमंदरते निकसाईं ॥
प्रातभयो फुन ताहिसमे, रश्मीरविकोमलजानिसगाईं ॥
दुंदभ भेरि निशानवजे, सुप्रलयवनकी धुनि जाहि लजाईं॥
[illegible]मानगजे, वर तीमुखकानकोपियगाईं ॥ २४ ॥

आरंद्रगंगको नीर करे पुन फूलपराग सुगंध चढाए ॥
गुंजत वीच सुभ्रंग फिरें, मिसताहि मनो शिवगीत सुनाए ॥
तरुलंवलता अति नाचतहैं, सुमनोभुजदंडनभाव दिखाए ॥
सारस हंस चकोर धुनी मिस, वायुमनो शिवपाठ सुनाए१२२॥

दोहा ।

पिख अनंद भूपति भयो, लागो करन उचार ॥
यह शिवनगरी पावनी, मुक्तिकरे संसार ॥ १२३ ॥

सवैया ।

तम हॉरद दूरकरे क्षणमै, पुन आनंद आत्ममै उपजाए ॥
विधुमोलपुरी मन अँचतहै, सुमनो पद मोक्षहि ज्ञान लजाए॥
जिह ठौरविषे यह गंगभले, अति वक्रभई इहभांति सुहाए॥
जन हासकरे यह चन्दकला सुकिधौंधर मोतिनहार सुपाए१२४

सोरठा ।

रथते उतर सुसूत, दई प्रकरमाभूपकी ॥
पिख विवेक पुरुहूत, दीरघ आयुविसालमति ॥ १२५॥

सवैया ।

गंगक तीर सुधीर महामति, मंदरऊच सुमेर सुहाए ॥
आदिनारायण केशवको, यह पावन थान महात्म गाए ॥
भूप निहार अनंदभयो, मुखभीतरते यह वाक अलाए ॥
क्षेत्रकुआत्म एहुसुनो, सुपुराविद पंडित मोहि वताए॥१२६॥

---

(१) गंगाकेनीरसेंस्नानकरके । (२) तालस्वरतानादि । (३) स्तोत्रपाठ अन्य सुगम है । (४) हृदयगततम । (५) काशी मानो मोक्षका पद कहिये कारण है । (६) क्षेत्रमेंहिमाके जाननेवाले व्यासादिकोंने पूर्व हमको क्षेत्राऽभिमानिदेवता केशव भगवान् कहाहै ॥

[रवाजिनऔरथनेमिदली, धरचूरणधूरअकाशउडाई ॥
र जान विरंचिसुलोकचली, नहि जानपरे रविलीनछपाई॥
ज कुंभसंधूर सुभूर सजे, तिनकी इहभांति सुकोरेवनाई ॥
तनसांझसमैदिगपश्चमते, यहलालघटाउमडीअधिकाई २५॥

कवित्त।

अपनी पराई मिल आई सैन दोऊजब,
गर्जेवीर ऐसे जन प्रलयघन आएहैं॥
भेदके सुवेलैमानो लोकनके सुखेदहित,
पश्चमसु पूर्वके सिंधु उछलाएहैं॥
राजनकेराय सुविवेक योंठराइ मन,
दरसननैयायिकको दूतके पठाएहैं॥
जैसे रामचन्दसुतवालिके पठाए तिन,
जाइ महामोहकों सुवाक योंसुनाएहैं ॥ २६ ॥

सवैया।

तजके हरिमंदिरसंतरिदे, सरितातट पावनकानन सारे ॥
तुम जाइ मलेच्छनमाहि वसो,इहभांति सुरायविवेक उचारे॥
नहि जो पुन धार कृपाणहते सभअंग गिरें धरमाहि तुमारे॥
तव जंबुक श्रोणत पानकरें पलें गीझ चरेंरणभूमिमझारे॥२७॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी बलिहार ॥
तिहते वहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ २८ ॥

(१) पंक्ति। (२) कीनारे। (३) शास्त्र। (४) मांस ॥

दोहा।

याहिठौर तज देहकौ, मिले परात्म जाइ॥
पुंनवंत जन लोकमैं, लहैं मरण इह आइ॥ १२

सूत उवाच॥

दोहा।

कामक्रोध पुन लोभलौ, भूपति हमे निहार॥
देखो दूर पलातहैं, ज्योंकातर असिधार॥ १
भूपति कह्यो प्रसाद हरि, सर्वसिद्धि जगहोइ॥
कर प्रवेश भगवानके, मैं वन्दो पद दोइ॥ १
रथते उतर प्रवेशकर, भूपति भले निहार॥
भगवनभक्त कलेशहर, जयजय सदा तिहा

विवेक उवाच॥

भुजंग प्रयात छन्द।

सुरंचैकचूडामणीदीपजागे॥
करे आरती पादकंजं सभागे॥
नखं जोतिशोभा लसे हेमपीठे॥
मनो कोटिखद्योत चांदे सुदीठे॥
भवं द्वैतसंभ्रांतिसंतानिताए॥
तुमे द्वैत मेटो करो वायछाए
क्षमामंडलो धार संभार पीने
लगी दाड कोटी गिरी चूर्कीन

(२) ... । (३) ...

श्रद्धोवाच ॥

सवैया ।

न मोहमहीप सुन्यो जवही, त्रिकुटीभ्रुकुटीखलताहि चढाई॥
ति क्रूर सुक्रोध महानभयो, दृग लालकरे इहबात अलाई ॥
विवेककरे दुष्टात्मताफल, याहिपिखे इमदूत सुनाई ॥
णहेत पखंडको आगमजो, खल मोह वली तव वीनपठाई२९

छप्पयछन्द ।

याअवसर पुन आपनी सैन अगारी आई ॥
श्रीसरस्वतीपद्महाथशशिकांतसुहाई ॥
वेदे वेदांग पुराण धर्म पुन शास्त्र सुजेते ॥
भारतलो इतिहास संगमिल आए तेते ॥
खतां प्रताप अरिसैनवल गयो निखल सकुचाइ अति ॥
न ज्यों अतिपावन धारपिख दिव्यधुनी जग पापगति॥३०॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

दोहा ।

मात प्यारी शशीमुखी, मृगनैनी वलिहार॥
तिसते वहुरों क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३१ ॥

श्रद्धोवाच ॥

तव देवी आगमजिते, वैष्णवसूर्यआदि ॥
गये सरस्वतीपास सभ, पूर शंषधुनि नाद ॥ ३२ ॥

(१) ऋग्, साम, यजु, अथर्वण, ये चारवेद ॥ आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद,
थर्ववेद, ये चार उपवेद ॥ शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दो, ज्योतिष, ये षट्
दिक अंग हैं ॥ नारदपञ्चरात्र, रुद्रयामलादिक, ये आगम हैं ॥ मत्स्यमार्कंडेयादि
[illegible] स्मृति ये धर्मशास्त्र हैं ॥

वलीयागमाही करे रूप भारी ॥
पदोंसाथ मापी त्रिलोकी सुसारी ॥
भुजादंडआगे गिरं छत्रलीने ॥
वलांरातिको मान कीनो सुखीने ॥ १३३॥
त्रसतगोकुलं त्राणकारी दयाले॥
टरीअंववरपा करे गोपपाले ॥
सुररातिभामासुसुंधूरशीशं ॥
सुसंध्याभ्रकांतं हसे देवईशं ॥ १३४ ॥
तिने दूरकारी मनो मारतंडं ॥
कहे कोविदा ईशतेदोरदंडं ॥
सुंदैत्येंद्रवख्यातटी पाटनारी ॥
नखंश्रेणकानाथतेरी उचारी ॥ १३५ ॥
त्रिलोकीरिपूकैटभो कंठकाठं ॥
कटे चक्रधारा करे भूमिमांठं ॥
फुरे ज्योतिंरुल्का सुजादामतेजं ॥
करेखीरशैनं सजे शेपसेजं ॥ १३६ ॥
सदा शंभुप्यारे महातेजधारी ॥
भुजादंडसंभ्रांतिशैलं मुरारी ॥
मथे खीरसिंधं भ्रमे वाहुपीने ॥
भयेंलांछनं ताहिवीचंनवीने ॥ १३७ ॥

(१) इंद्र। (२) हिरण्यकशिपु। (३) कैटभदैत्यका स्थूल कंठ। (४) भूमिको एक रस किया। (५) मन्चलतज्योति। (६) भुजारूप दण्डेकर भरमताभो है मन्दराचल। (७) चिह्न॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

मात प्यारी शशीमुखी, मृगनैनी वलिहार ॥
तिसते वहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३३ ॥

श्रद्धोवाच ॥

कवित्त।

सांख्य औ न्याय सुकणादकृत भाष्य पुन,
आगम अनेक सुमीमांसा संगलियाईहै ॥
युक्ति अपार मानो भुजाही हजारफुरें,
दिशाको मिटाइतम जंगहुलसाईहै ॥
धर्मेंदुआनन सुवेदत्रयी संग मनो,
तीननैनहूं सोंकात्यायनी सुहाईहै ॥
सरस्वतीके आगे प्रगटानी सुसहायइत,
विजुरी अनेकजनु आई चमकाईहै ॥ ३४ ॥

शांति रुवाच ॥

दोहा।

स्वभावविरोधी आगम, तरक तथा पुन जान ॥
मिले कथं रणहेत सभ, माता करो वखान ॥ ३५ ॥

श्रद्धोवाच ॥

समानवंशते जेभये, लरे परस्पर सोइ ॥
जो परसों पुन रणपरे, संगति ताकी होइ ॥ ३६ ॥
तिमहम वेदप्रसूत सभ, कछु विरोध निजमाहिं ॥
वेदसुरक्षणहेत पुन, सभ इकत्र होइजाहिं ॥ ३७ ॥

(१) ये सारे मीमांसाके विशेषण हैं। (२) धर्म वेदाऽर्थसोई भया इन्दु (चन्द्रमा) तद्वत है मुख जिसका। (३) तीनवेद हैं नेत्रजिसके। (४) यथा कुरुपांडव.॥

सुमोतीफलोदारहारं सुहाए ॥
प्रभा कंठमध्ये सके को बताए ॥
महामोहछेदी दिजे बोधनार्थं ॥
नमो देवपादं दोऊजोर हाथं ॥ १३८ ॥

दोहा ।

आदिनारायण दीनवर, भये प्रसन्न उदार ॥
बोध बली सुत होइगो, भूपति भौन तिहार ॥ १३९ ॥
मंदरनिकस विवेक पुन, पिख इम कीन प्रकास ॥
यह नीको स्थान है, ईहा करोंनिवास ॥ १४० ॥

कवि रुवाच ॥

दोहा ।

सभासमेत सुएहु जब, पेखी भूपति रीत ॥
कीरतिवरमा देव तव, भयो इकागर चीत ॥ १४१ ॥
उपजेगो वैराग मन, आइ सरस्वती दयाल ॥
बोधकरे मनको भले, ह्वैहै कथा विशाल ॥ १४२ ॥

इति श्रीमन्मानसिंह चरण शिक्षित गुलाबसिंह विरचिते प्रबोधचन्द्रोदय नाटके चतुर्थोङ्कः समाप्तः ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्य परमानंद शिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदय नाटक चतुर्थाऽङ्कटिप्पणिका समाप्ता ॥ ४ ॥

नास्तिकपक्ष निषेध हित, संगतभई हमार ॥
आगममाहि विरोधनहि, कीनो तत्त्वविचार ॥ ३८
शांतिअनंत सुज्योतिजो, अद्वैअजवल एक ॥
मायाके वहु संगमिल, भासे रूप अनेक ॥ ३९ ॥
नानाआगमपंथ वहु,एक जनावत ईश ॥
ज्यों वहुनदीप्रवाह जल, मिले जाइ वारीश ॥ ४० ॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी वलिहार ॥
तिसते वहुरों क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ४१ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सवैया।

तव युध आरंभ भयो दुहूंते, रण आपसमें करि कुंभमिलाए
सुतुरंगमसंग तुरंग जुरे, रथसंग रथी सुप्रहार लगाए ॥
सरपुंज पदाति चलाइ इसे, जनतोयद रोपभरे वरपाए ॥
अतियुध भयानक भूर भयो, डर कातरवीर महांहरपाए॥४२
तह श्रोणतकीसुभई तटनी, वहुभूत पिसाच सुकंक सुहाए ॥
सरदार तुरंग मतंग वडे, जगदीश मनो तन सैल वनाए ॥
सिर छत्र सुहंस समान फिरे, सितपागसुफेनमनो चमकाए॥
अतिवीर वली तह नक्रभये, पिख कातरतां उरमें दहलाए४३

चौपाई।

याविध दारुण भयो संग्राम । पखंडागम इम कीन सुकाम ॥
लोकायतको तंत्र सुजोई । कीनो सैन अगारी सोई ॥ ४४ ॥
परस्परं दोनोदल जुटे । मुए लोकायत प्राण सुछुटे ॥
वहुर पखंडागमदे जोई । भये निर्मूल सगल तिहसोई ४५॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः ।

अथ पञ्चमोऽङ्कप्रारंभः ॥ ५ ॥

दोहा ।

पदप्रसाद रघुनाथके, लहे बोध मतिमान ॥
हने मोहबलवानको, तिह बन्दो भगवान ॥ १ ॥
कीरतिवरमाभूपके, देखत सभामझार ॥
श्रद्धा कीन प्रवेश तव, लागी करन उचार ॥ २ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सवैया ।

प्रसिद्ध सुपंथ अहे जगमें, यह जातिकुवेर वडो दुःखदाई ॥
क्रोध दवानलते जुवढी, क्षणमें सगली कुलजाहि पपाई ॥
ज्यों वनवांससंघ रसनते, पुनपावककाननखेहरलाई ॥
तिमहींमह वाधवक्रोधजले, दुखमूरभयो दगतेजलजाई॥३॥
दुःखदेखनअंकलिखेविधिभाल,सुआजपिखेनद्विजातमिटाए
मम सोदरबन्धु हते रणमें, तन भूमिरुले किहटोर सिधाए॥
दुरवारण दारुण शोक महां, अतिपावकमें उर भूर जलाए॥
सुविवेककी मेह अनेक परे,क्षणपावकशोकनलाटवुझाए४॥
सागर शैल मही सरिता, सभअंतकअंतलमे सुखपाए ॥
तो त्रिणजीरणसें तनुमें, जन कोविदको भवमें पत्याए ॥

---

(१) [illegible] नाम श्रद्धा है. ॥

सोमसिद्धांत कपालक जोई। सत्य आगम पिख भाग्यो सोई॥
सत्यआगम इहुआइ वखानी। सुनो ताहिकी साची वानी॥४६॥
वेदभवभेपज करें वखान। ते मतिमंद सुमहा अजान॥
मनुस्मृतिलौ आगम जेते। सुने नमूढन कानन तेते॥४७॥
तथाचस्मृतिः–सुरां पीत्वा द्विजो मोहादग्निवर्णां सुरां पिवेत्।
तेन निर्दग्ध कायस्तु मुच्यते किल्विपात्ततः॥ १ ॥

चौपाई।

सत्य आगम प्रवाह वहाए। सौगत काशीछोडि पलाए॥
वारांसीक औ सिंधुगंधारे। अंग वंग पुन मगध पधारे४८॥
म्लेच्छप्राय कलिंगादिक जेई। तामै जाइ वसे पुन तेई॥
और पखंड दिगंवर जेते। गये पंचालदेशको तेते॥४९॥
मालव और अभीर अनिरता। सागर मारूदेश त्रिगरता॥
विचरे तामै गूढ स्वभाए। मंदरसेवक द्वारवनाए॥५०॥
नास्तकतर्क अहै पुन जेती। दलीमीमांसा पाइन तेती॥
जहां अनुपथ मै वही सिद्धाई। जहां पखंड दुरे जगजाई५१॥

विष्णुभक्तिरुवाच॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी वलिहार॥
तिसतें वहुरो क्याभयो, मोको करो उचार॥५२॥

(१) मनुस्मृति, अर्थ यह:–द्विजकहिये ब्राह्मण रागसें वा प्रमादसें सुरापानकरके अग्निवर्णवाली सुराका पानकरे तिस सुरापानकरके दग्ध शरीर हूआ तिसपापसें छुटिजावैहै।
(२) ये सर्वदेशोंके नामहैं॥

यद्यपि यों सुविचारकरों, पुन तदपि शोक विवेक दवाए ॥
दीरघ शोककी ज्वाल वढे, विधहा उर अंतर मोहि जलाए॥
यद्यपि क्ररस्वभावहुते, मम भ्रात चले कुपंथनमाही ॥
काम सुक्रोध तथा मदमान मुए सगले रणमंडल माही॥
तदपि दुःख कटे उरको, अरु देह सुकावत मैं जगमाही ॥
शोक दवानलज्वाल लगी मम अंतरआत्मकाननमाहीं ॥६॥

चौपाई

करकै मनकेमाहि विचार । श्रद्धा वहुरों कीन उचार ॥
विष्णुभक्ति उर परमदयाल । एसो मोप्रति कह्यो विसाल॥७॥

विष्णुभक्ति रुवाच ॥

शंकरछन्द ।

इहठौर संगर होइगो भट करेंगे कुलनास ॥
मैहरसाकों पापनहि मनमोहि भयो उदास ॥
अव छोडिके वनारसी मैं सालग्रामसु जांउ॥
भगवानके स्थान वसकर काल तादि वितांउ ॥ ८ ॥

दोहा ।

श्रद्धे युध वृरतांत सभ, करीनिवेदन आइ ॥
सो मै सगलो ताहिढिग, करों निवेदन जाइ ॥ ९ ॥

भुजंगप्रयातछन्द ।

तहांविगश्रद्धासुनीकेसिधाई ॥
पिखेतीरथं गंडकापावनाई ॥
जहां आप देवो सदा वास धारे ॥
स्रसंसारसिंधुं जनं पारतारे ॥ १० ॥

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई।

हुरों वस्तुविचार उदारे। काम बली रणभीतर मारे॥
मा क्रोधगहिके सप छार्‍यो। हिंसादिकको मूल उखार्‍यो ५३
न्तोपलोभकोई उरण मार्‍यो। ज्यों रघुपति दशकंठ संहार्‍यो॥
ष्णा चोरी मिथ्यावैन। परिग्रहसहित उडाएगैन॥५४॥

अनसूया मत्सर जिती, नीके शंखवजाइ॥
परउत्कर्षहिभावना, मदको दीन खपाइ॥ ५५॥

विष्णुभक्ति रुवाच॥

दोहा।

भलाभया अरिगन मूए, संगरभूमिमझार॥
महामोहवृतांतजो, मोको करो उचार॥ ५६॥

श्रद्धोवाच॥

दोहा।

योगेउपसरगनसंग पुन, महामोह खलजोइ॥
लीनभयो कहि कंदरे, जापतनाही सोइ॥ ५७॥

विष्णुभक्ति रुवाच॥

चौपाई।

ह अनरथहि कारण जोई। रहियो सेपयह भली नहोई॥
रुप विवेकी जोसुरज्ञान। जोचाहे अपनी कल्यान५८॥

(१) योगविघ्नसंग। (२) देवमानी॥

दोहा।

अग्नि ऋण अरु शत्रुको, देवै मूल उपार ॥
रहे सेप काहुसमै, वहुर देहि दुखभार ॥ ५९ ॥

चौपाई।

मनको समाचार है जोई। श्रद्धा कहो प्रगट मोहि सोई ॥
श्रद्धा लागी करन बखान। विष्णुभक्ति सुनिये देकान ६०॥
मूएपूत अरु पोते सारे। भयो दूखमन चीतमझारे ॥
शोकवेगमन भूरि वहायो। जीवन त्याग सुतिहठहिरायो ६१
विष्णुभक्ति मुखमै मुसकानी। वहुरों याविध कीन वखानी ॥
जो मनमरे सुजगतमझारे। तो सभ कार्य होहि हमारे ६२॥
पुरुप सनातनहै जगजोई। परमानंद सुपावे सोई ॥
परदुष्टात्म मनहै जोई। जीवनत्याग कहांतिन होई ६३
श्रद्धा वहुर सुकीन बखान। विष्णुभक्तिमें भाख्यो मान ॥
वोध उदेहित तूं दृढहोई। वेगमरे मनरहे नकोई ॥ ६४ ॥
विष्णुभक्ति कर अंगीकार। वहुरोंलागी करन उचार ॥
वैरागउत्पतिहेत योंकीजे। व्यांससरस्वती तहां पठीजे६५

दोहा।

भई सुअंतरध्यान वैहु, ऐसै मुखो अलाइ ॥
मनसंकलपसु दोन पुन, वरे सभामहि आइ ॥ ६६ ॥

---

(१) सो शास्त्रमेंभी कहाहैः—अत्यादरपरो विद्वानीहमानः स्थिरां श्रियम्। अग्नेः शेषं ऋणाच्छेषं शत्रोः शेषं नशेषयेत् ॥ अर्थयहः—अत्यंत आदरयुक्त विद्वान् निश्चलसंपत्तिकूं इच्छाकरताहुआ अग्निकेशेषकूं ऋणकेशेषकूं शत्रुकेशेषकूं अवशेष नछोडे अर्थात तिसतिस समयमें दूरकरे। (२) व्यासभगीतवाणी। (३) विष्णुभक्ति तथा श्रद्धा ॥

चौपाई।

लोल दोलं सम भोग सुहाए। जरा प्रणाम भये दुखदाए॥
विपदाको यह गेह पछानो। धनको नास परमदुखमानो१२९
जितेलोक सभेदेवहि शोक। अवला अहे अनरथन ओक॥
याहि घोरसंकटपथमाही। हाहाजीव अज्ञलपटाही॥१३०॥
योंभापत वैराग सुआयो। सारस्वती तव वैन अलायो॥
हेसुत आयो यह वैराग। आदरकरो सुतिह वडभाग १३१
कहांपूत मन एहु उचाऱ्यो। वैरागसमीप सुतिह अनुसाऱ्यो
तातचरण अव तें दरसाए। यह वैरागसु लागत पांए१३२॥

मन उवाच॥

जन्मसमे तव दरसन पाए। फेर पूतकहु कहां सिद्धाए॥
मेरे कंठ मिलो सुत पिआरे। मिले वैराग सुभुजापसारे १३३
तव मन याविध वैन अलायो। तें पेखत मम शोक पलायो॥
वैराग वहुर मनको योंकहै। कहा शोकको अवसर अहै१३४
ज्यों पथभीतर पथंक मिलाए। समापाइ पुन वीछुरजाए॥
ज्यों त्रिणकाठसु नदीप्रवाहा। कवीमिले कवहोहि दुराहा१३५
ज्यों जलबूंद मेघकी धारा। यथा जहाजसु सिंधुमझारा॥
पिता मात सुत वंधु सुदारा। मिलें विछुरेयाजगतमझारा१३६
याको होइ वियोग सुजवहीं। शोकनलए विवेकी तवहीं॥
ईहा जगतकी गतिहै जोई। कोटनमाहि लखै नर कोई१३७
पूर्वहुतो तात नर जोई। मरकर भयो पूत सुत सोई॥
पूत तातहित पिंड कराए। तात पूत कहिगो दखिलाए१३८

(१) डोला वा हिंडोला। (२) राही। (३) संयोगजोहे सो वियोगजन्यही है॥

सवैया।

मन नैननते अतिनीर वहे, पुन मुंड धुने मुख एहु अलाई ॥
कहि पूत गए तज मोहि ईहां, इकवारसु देवहु फेर दिखाई ॥
कहि राग गयो कहि द्वेषगयो, मदमानमुए कछुसार नपाई ॥
मम अंगनमें दुःखआगिवले, इकवारमिलो गलभीतर आई६७
इहठौरनवृद्धजहाजकोऊ मम, शोकसमुंद्रहिते गहि तारे ॥
सुअसूयतेआदिसभे दुहिता, किहठौरगई नअहे कछुसारे ॥
तृष्णादिकजे सुतनारिहुती, किहभांतिमुई सभलोकमझारे ॥
विनभागसुमें दुखभूरभये, इकवारमुए सबवन्धु हमारे ॥६८॥
अव व्याकुल मेउर भूरभयो, विप पावक जानलगी उर आए ॥
अति दूखभयो तनुछीदतहे, दुःखशोकदवानल देह जलाए ॥
मम आज विवेक सुलोपभयो,सुत मोह महा उरमाहि वढाए॥
अव जीवनमें जग दूरभयो, तनतापवडो उरमोहि तपाए ६९

दोहा।

यों नृपसभामझार मन, भई मूरछा भार ॥
आइसंकल्प सुतिहकह्यो, राजन देह संभार ॥ ७० ॥
सावधानमन होइ पुन, वोल्यो यों मुखमाहि ॥
कहां प्रवृति सुनारि मम, देत दिलासा नाहि ॥ ७१ ॥
सुन संकल्प दृग नीर अति, लागो करन उचार ॥
देवप्रवृतिसुकहा अव, ढूढों जगतमझार ॥ ७२ ॥
कुटंव शोकदवदाहिसों, दग्धरिदे अतिहोइ ॥
खेह उडी तनकी सुनो, मुई जगतमें सोइ ॥ ७३ ॥

दोहा।

तोहि पिता महिं मुएको, भये वरष सुत तीन ॥
हम भूमंडलमें वसें, वहु भये अमरपुर लीन ॥ १३९ ॥

चौपाई।

वहूं मर पर लोक सिधाए। कवहूं ग्रह भीतर उपजाए ॥
नगतिजाने मूरख रोवै। विवेकी शोक नरंचक जोवै१४०
से वचन सुने मन जवहीं। भयो अनंद चीतमें तवहीं ॥
रस्वती जैसे यह कहै। सत्य वात एवेंही अहै ॥ १४१ ॥
वमैनीके लयो निहार। जूठो अहै सगल संसार ॥
वजोवन नारी है जेई। मधुकरसहित खिरे द्रुमतेई१४२॥
ल मालती वहुत सुगंध। पसरे जह तह पौन सनवंध ॥
गतृष्णासायर जल जैसै। भयो विवेक पिखोअव तैसै१४३
हुर सरस्वती करुणा वान। मन प्रति लागी करन वखान ॥
द्यपि यों तव भयो सुभान। तदपि वत्स कह्यो ममभान १४४
रही एक महूरत वीर। विनआश्रम नहोवै धीर ॥
ते अहे निवृतिसुजोई। धर्मचारणी कीजे सोई॥१४५॥
से मंगलकरइ सनान। फूलमाल सिरऊपर ठान ॥
ले कपूरकुंकमपट भीने। वाजे संग अनेक सुलीने १४६॥
याही तव प्रवृति सुनारि। त्योंनिवृति कर अंगीकारि ॥
शिपासूत्र अव तजो विसाल। होइ दिगंवरके मृगछाल १४७॥

(१) तथा च महोपनिषच्छ्रुतिः ॥ सशिखंवपनं कृत्वा बहिः सूत्रं त्यजेद्बुधः ॥ यद-
रं परं ब्रह्म तत्सूत्रमिति धारयेत् ॥ १ ॥ सूचनात्सूत्रमित्याहुः सूत्रं नाम परं पदम् ।
तत्सूत्रं विदितं येन स विप्रो वेदपारगः ॥ २ ॥ अर्थ यह—सन्यासेच्छु बुद्धिमान्पुरुष

मन उवाच ॥

चौपाई ।

हाप्यारी किह ठौर सिधाई । भयो दूख मोको अधिकाई ॥
स्वप्नेभी मोहिसंग पियारी । हमेनहोती रंच न्यारी ॥ ७४ ॥
आज भागविन दूर सिधाई । जीवनमोहि भयो दुःखदाई ॥
तदपि जीवो पापी भार । गिरियो मूरछा धरनमझार ७५

संकल्प उवाच ॥

राजन सावधान अतिहूजे । होनीमाहि विपादन कीजे ॥
भयो स्वस्तमन देह संभार । कहे संकल्पहको सुउचार ॥ ७६ ॥

मन उवाच ॥

चौपाई ।

सुत अरु दारवियोग सुजोई । जाहिभयो दुःख जानत सोई ॥
अव जीवनकी चाहन मोकों । मरों वेग इम भाषत तोकों ॥ ७७॥

दोहा ।

चिता वनावो वेग अव, करोंसु अनल प्रवेश ॥
शोक अनल दुःख दाहजो, मेटो सकलकलेश ॥ ७८ ॥
याविध व्याकुलमनभयो, पायो वहुत कलेश ॥
तवै सरस्वती आइ पुन, कीनो सभाप्रवेश ॥ ७९ ॥

सवैया ।

श्वेतदुकूल धेरे तनमें, मुख सारदचन्दसमान सुहाए ॥
कर एकविपे सभ आगमहे, पुन एकविपे मणिमाल फिराए ॥
पुन दोनविपे अभैवरदान, महाभुजसुंदर चार सुहाए ॥
वैन मयूपन आत्मको, तम दूरकरे उरताप मिटाए ॥ ८० ॥

संतनसंग सो भले विचार। वसो इकांतसु विपिनमझार ॥
वन नवनीलसरोज सुलोचन। गहोनिवृतिहोयभवमोचन१४८
लाजसहित मन करे उचार। देवी कहहुसु अंगीकार ॥
बहुर सरस्वति करे अलाप। मनके निखल मिटावे ताप१४९

दोहा।

समदम सतसंतोपलो, उपजे पूत तुम्हार ॥
सेवा तेरी वैकरे, सगलेदुःख निवार ॥ १५० ॥

चौपाई।

यम अरु नेमआदिकहै जेते। तोहि वजीर होहिंगे तेते ॥
ब्रह्मचर्य जो अहे महान। मंत्र कहेगो तेंढिगआन१५१ ॥

दोहा।

विवेक उपनिषत संगमिल, यौवराज सुखसार ॥
तोहिअनुग्रहते लहे, शांतिपूत उरधार ॥ १५२ ॥
मैत्रीआदिक चार यह, वहिनि मनोमलहार ॥
विष्णुभक्ति तोपे पठी, आदर इने सुधार ॥ १५३ ॥
सरस्वती आय सुजो करो, धरीशीश मम सोइ ॥
योंकहि शीश झुकाइयो, गहे चरन कर दोइ ॥ १५४ ॥
आयुप मत सादरापिखो, यह संगत सुखकार ॥
यम नेम आसन सहित, प्राणायाम सुधार ॥ १५५ ॥

—शिखासहित मुंडन करवायके बाहरले सूत्रका त्याग करे जो अक्षर परब्रह्मरूपि सूत्रहै तिस सूत्रको धारणकरे काहेतें; सूचनसे परब्रह्महीं सूत्रहै ऐसे कहतेहैं इसलिये सूत्रनाम परम पदका है सो सूत्र मान्याहै जिसने ऐसा जो विप्र सो वेदपारगामि होताहै अर्थात् वेदके तात्पर्यको जाननेवाला होताहै ॥ १ ॥ २ ॥ युवराजकर्मका नाम यौवराजहै सो युवराजकर्म यहहै अपने जीतेहीं राज्याभिषेकको देना ॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई ।

विष्णुभक्ति मोको सुपठायो । सखी सरस्वती मन दुख पायो ॥
संतानवियोगभयोदुःखभारी । करो जाइ तिह बोध उदारी ॥८१॥
मनको जिहविध होइ वैराग । तैसो यतनकरो वडभाग ॥
सो मैं अब मनकी ढिगजावों । तहाँजाइ वैरागउ पावों ॥ ८२ ॥
गई सरस्वतीमनढिगआकुल । कह्यो पूत क्यों भयो व्याकुल ॥
पूर्वहीते लख्यो प्रभाव । सभे अनित्य अहे जगभाव ॥८३॥
अध्ययनकीयेतेंनिखलइतिहास । भारतलौ सभकथा प्रकास ॥
कलपशतायु अहे जगजोई । मेरे अंत चतुरानन सोई ॥८४॥
इंद्रलौ सुर असुर सुजेते । मरें अंतको सगले तेते ॥
मनुआदिकमुनि मही समुंदा । नष्टकरे क्षण कोट मुकुंदा ॥८५॥
अहो मोह काते तव भयो । जाते वडो शोक उरछयो ॥
नष्टशरीर नष्ट जव होई । कोविद शोककरे नह कोई ८६॥
भाव अनित्य सदा उर धारो । नित्यअनित्य सुवस्तु निहारो ॥
नित्य अनित्य विवेकी जोई । शोकवेग तिह छुहे न कोई ८७॥

तथाच श्रुतिः ॥

एकमेवं यदा ब्रह्म सत्यमन्यद्विकल्पितम् ॥
को मोहस्तत्र कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥ २ ॥

---

(१) मनही । (२) अर्थ यहः—जहाँ असङ्गाद्वितीयपनतहाँ सत्य है औ यहाँ भिन्न सर्व विकल्पित है नाम अनिर्वचनी है इसप्रकार एकत्वहूं नाम परमार्थहूं जानतेहुये जीवन्मुक्तिको तहाँ कौनमोह है कौन शोक है न कोई मोह है न कोई शोक है मोहा-ऽभावात् शोकोपि नास्तीत्यर्थः ॥

दीरघायु इनसंग तुम, अवे लहो सुखसार ॥
सामराज निजलोकमें, नीके करो उदार ॥ १५६ ॥
तोहि इकाग्रहूंभये, जीवं लहे सुखसार ॥
तव चंचलता संग वस, पाए वहुतं विकार ॥ १५७ ॥
सागरवीचीभेदते, ज्यों रवि नाना होइ ॥
बुद्धिंवृत्ति वस जीव वहु, भयो परात्म सोइ ॥ १५८ ॥
वृतां सकल संकोचकर, वत्स तू सनीधार ॥
सहिजानंदसु आत्मा, लहेसूप निजसार ॥ १५९ ॥

चौपाई।

पातीवंधु जिते रणमारे। प्रेतपतिके भौन सिधारे ॥
जलतिलांजुली ताको दीजे। देवनदीमें मज्जन कीजे १६०॥
अ मन नैन न नीर वहायो! वहुरो याविध वैन अलायो ॥
कछु आयुसु अहे तिहारी। करों सकल मैंसिरपरधारी ॥

दोहा।

सारस्वती मन भाखि, योतजी रंगप्रवृति ॥
कीरतिवरमा देव तव, गहीचीत निरवृति ॥ १६२ ॥

(१) परमात्मभावको माप्त होवे। (२) षट्विकार। (३) सो परमात्मा
वृत्तियोंके अधीन होयकर नानाजीवरूपसें मतीत होवे है तथा च श्रुतिः ॥
एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः। एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥
अहः—एकही भूतात्मा (परमात्मा) भूतभूतमें स्थित हुआ तथा एकप्रकारका
भी जलमें चन्द्रमाकी न्यांई बहुतप्रकारका देखनेमेंआवे है इति। (४) नाटयप्रवृत्ति ॥

मन उवाच ॥

दोहा।

शोक वेग दूपतभयो, देवी चीत हमार ॥
व्है विवेक सुठौर नाहिं, मेरे चीतमझार ॥ ८८ ॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई।

पूत सनेह दोपहैं भारी। जाते होइ अनरथ विकारी ॥
विपवलीवीजन सम जानो। करे कलेश अंतको मानो८९॥
सुत अरु नारी प्यारे जान। कीजे तहाँ सनेह महान॥
वज्र अग्नि जाके उर अंतर। उपजे वेगदूपके अंकुर ॥ ९० ॥

दोहा।

ताते शोक अनेक द्रुम, उपजे जगतमझार ॥
दूप अनल तनदाहकर, करे चीतको छार ॥ ९१ ॥

मन उवाच ॥

दोहा।

देवी यदपि ऐंवहे, तदपि शोक सुभार ॥
मेउर अंतरको दहे, सकौनप्राणसुधार॥ ९२ ॥
सरस्वती तें पदकंज जो, जीवनको सुखदैन ॥
भलाभया प्राणांतमे, सो पेखे निजनैन ॥ ९३ ॥

सरस्वती उवाच ॥

दोहा।

यह इक और अकाज सुत, चाहतहै वसमोह ॥
जो आत्म निज हननको, कीनो निश्चे तोह ॥ ९४ ॥

सोरठा।

जेनहे पूत प्रबोध, उपनिपतसु विवेक मिल ॥
साधन वडो निरोध, जीवनमुक्तिसु होइगी ॥ १६३ ॥

इति श्रीमन्मानसिंहचरणशिक्षित गुलाबसिंह विरचिते प्रबोधचन्द्रोदयनाटके वैराग्यो नाम पञ्चमोऽङ्कः समाप्तः ॥ ५ ॥

---

(१) यह षष्ठमअङ्कका बीजहै ॥

इति श्रीमदुदासीनवर्य्ये परमानंदशिष्य गुरुप्रसादविरचिता प्रबोधचंद्रोदयनाटक पञ्चमांऽकटिप्पणिका समाप्ता ॥ ५ ॥



चौपाई।

काम सुलोभादिक सुत जेते। अति अपकारी जानो तेते॥
इनहित संचो कीजे जोई। करे अनरथ अंतको सोई ९५॥
संचेहित जन अतिदुःखपाए। कामलोभ वहुपाप कमाए॥
लोभ जन्ने उरमें हुलसाए। नदी अनेक सुगहन तराए ९६॥
अतिऊचे पुन सैल चढाए। कानन घोरमाहि भरमाए॥
धनमदमलनक्रुर मुख राजे। खडो कराए तिह दरवाजे९७॥
भने क्रुर भूपति मदभीने। हाथजुराइ करावत दीने॥
यों अपकारी तें सुत जेते। तांहित लहें कलेश सुएते ९८॥

मन उवाच॥

चौपाइ।

है योंही ज्यो मुखो वखाने। तदपि मे दुख और न जाने॥
तिनके ललत वोल रिदहारी। चिरंकाल रिदमाहि चितारी९९
मनोप्राणको होइ विछेदा। याविध मैं पावों उर खेदा॥
याविध सुनि मनकी दुखवानी। कहे सरस्वती मुखोभवानी१००

सरस्वती उवाच॥

दोहा।

ममताकी जन वासना, प्रेमसहित दृढहोई॥
तिहमूलक अतिमोहवस, दुःखपावत जन लोई॥१०१॥
ग्रहकुकटको खाइ मन, जव मंजारग्रह आइ॥
ममताके वस होइ तव, दूखघनो जन पाइ॥ १०२॥

---

(१) तुमको दुखदाई। (२) मदीयत्वाऽभिमानका नाम ममता है तिसकी जावासना कहिये सर्वदा काल वर्तणा सोई है मूल कहिहे कारणजिसका महामोहका तिसमहामोहके वस यहदोहाका तात्पपार्थ है। (३) मुरगा॥

ॐश्रीगणेशाय नमः ।

अथ षष्ठोऽङ्कः प्रारंभः ॥ ६ ॥

दोहा ।

याउपरंत सुहोयगी, जीवनमुक्ति रसाल ॥
सभामाहिं प्रवेशतव, कीनो शांति विसाल ॥ १ ॥

शांति रुवाच ॥

चौपाई ।

... पायो ॥
विवेक इम मोहि अलायो। समाचार शांतितैं
सुत कामादिकथे जेई । मुए महारणभीतर तेई ॥ २ ॥
ह विलीन वैराग्य उपाए । पंचकलेश सुदूर मिटाए ॥
न प्रशांतिकी संगति धार । ततबोध नरकरे विचार ॥ ३ ॥
म उपनिषदपास अब जावो । आदरकर तिहममढिगल्यावो ॥
ांकिहि शांति सुजब पधारी । श्रद्धा आवत ताहि निहारी ॥४॥
हृत्पद्र इम शांति उचारे । यहश्रद्धा कहुमंत्र विचारे ॥
इही ओर यह आवत नीकी । सुनो भला अब याके जीकी॥५॥

(१) [illegible] लक्षण—[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] जीवन्मुक्ति है । (२) ([illegible]) [illegible] [illegible] है, १ [illegible] [illegible] है, २ [illegible] [illegible] है, ३ [illegible] [illegible] है ४ [illegible] [illegible] है ५ ॥

ममता सून सुग्रह चटका, औ मूसाखाइ विडाल ॥
विनसनेह दुख नाहि सुत, होवत हर्ष विसाल॥ १०३॥
सर्वअनरथसुवीज सुत, ममताही जगजान ॥
तां छेदनके माहि पुन, करो यतन मतीमान ॥ १०४ ॥

मन उवाच ॥

चौपाई।

मेतनते सुतथे उपजाए। कुकटमूसासम किम गाए॥
ताको नास जने दुःखभार। कहे सरस्वती वहुर विचार१०५

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई।

यातनते यूका उपजाए। औ त्रणकृमी नहिजात गिनाए॥
यतन सहित ताको नरखाए। दूख न रंचक मनमै पाए१०६॥
यूका कृमि सुत होइ समान। एकनको उर जान संतान॥
महामोह एकनमै धार। मुए मूढ दुख लहे अपार १०७

मन उवाच ॥

चौपाई।

तम अज्ञान ग्रन्थहै जोई। दुहउछेद जानो मैसोई॥
सरस्वती तूं सर्वज्ञ उदार। लोकनमै जस आहितुमार१०८
निरंतर कीनो दृढ अभ्यास। सनेह सूतजीवनको फास॥
जाते फास इहै तुटिजाइ। देवी कहो सुमोहि उपाइ १०९॥

दोहा।

श्रद्धा तवे प्रवेशकर, कीनो इहै विचार ॥
नैनसुधा पूरतभये, भूपतिकुलहि निहार ॥ ६ ॥
जहांदुष्टनीकेहने, पूजेसंतसमादि ॥
वशैअनुजीवीसेव्यहै, स्वामिदेव अनादि ॥ ७ ॥
शांतिकहे अंवा सुनो, कौन सुमंत्र विचार ॥
करेचीतकहिहैंचली, मोको करो उचार ॥ ८ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

में विवेककेढिग चली, पठीपुरुष मतिमान ॥
पुरुषविवेक मिलाओगी, मंत्र इहै उरठान ॥ ९ ॥

शांति रुवाच ॥

दोहा।

कहो पुरुषको कौनविध, मनसों वरतन आहि ॥
काराग्रह वांधेविषे, ज्योंवरते नरनाहि ॥ १० ॥
कहो पुरुषहीं करेगो, सामराज जगमाहि ॥
अहेशांति इउहीं सुनो, ज्योंसमुझे मनमाहि ॥ ११ ॥
कैसे मायामाहि अव, देव अनुग्रह आहि ॥
निग्रह यों कहिवेरह्यो, कहें अनुग्रह काहि ॥ १२ ॥

(१) राजकुलको। (२) राजकुलमें मोहादिक। (३) वनकहिये शमादि फर्मकर अनुजीवीरहिये ईश्वरके अनुभाव है जीवना जिनोंका सो कहिये वशअनुजीवी ऐसे जे जीवहैं तिन जीवोंकर स्वामीदेवअनादि सेव्य है नाम पूज्यहै। (४) श्रद्धा कहतीहै हेशांति निग्रह ऐसा तेरेको कहना रहाथा, (उचितथा) परंतु अनुग्रहऐसे कैसाकहती है काहेतें ॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई।

अनित्यसु उरमैं धारो। प्रथम उपावसु यही निहारो ॥
समागम अहेसु जोई। विजुलीचमतकारसम होई ११०

दोहा।

ऐसे उरमै धारतूं, करो सुदृढ अभ्यास ॥
होहु सुखी सुतलोकमै, कटे मोहकी फास ॥ १११ ॥

मन उवाच ॥

दोहा।

देवी तोहिप्रसादतें, नष्टभयो मम मोह ॥
पर उरमाहि संदेह इक, पूछतहो अब तोह ॥ ११२॥
तव मुखचन्दमरीचते, सुधाझरे उपदेश ॥
क्षालत मैं उर मलन पुन, हरहे शोक कलेश ॥ ११३ ॥
शोक सुमूल प्रहारको औषध जो जगहोइ ॥
तापत मैं उरमलनको, मात बतावो सोइ ॥ ११४ ॥

सरस्वती उवाच ॥

चौपाई।

कहैं मुनिश्वर सर्व विचार। मरमभेदते शोकप्रहार ॥
ताहि निवारण औषध इहै। चिंता उरमें मूल नगहै ॥ ११५॥

मन उवाच ॥

दोहा।

कह्यो तुमारो ससत्यहै, परचिंता है दुर वार ॥
चिंता चित्त डुला ईहै, ज्योंजलइंदुव्यार ॥ ११६ ॥

(१) पदार्थ। (२) फनर्यंदपदेका नाम तिथि है। (३) मर्मभेद फा...
दुःखके करनेवाले ने शोकप्रहार है ॥

माहि माया अहे, सर्वअनरथनवीज ॥
को निग्रह भलेकर, कियोचहे निरवीज ॥ १३ ॥

शांति रुवाच ॥

कारायहमै डारमन, माया निग्रहकीन ॥
कहो काहिमे अबअहे, भूपतिको उरलीन ॥ १४ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

नित्य अनित्य विचारमें, सदा चितपरवाहि ॥
इह अमुत्र वैराग्यजो, वही सुहृद सुआहि ॥ १५ ॥
मंत्री अहे यमनेमही, सम दम सखा सुजान ॥
मैत्री करुणादिक सभे, यही ग्रहदासी मान ॥ १६ ॥
है मुक्तेच्छा सहचरी, भये पुरुष वलवंत ॥
ममता मोह संकल्पसह, हने कृपा भगवंत ॥ १७ ॥

शांति रुवाच ॥

दोहा।

कहो स्वामी पुरुषकी, धर्मकर्मफलमाहि ॥
किहिविध अहे प्रवृतिअब, मै समुझों मनमाहि ॥ १८ ॥

श्रद्धोवाच ॥

सोरठा।

जादिन भयो वैराग्य, पुर्योलेदिन ताहिते ॥
इह अमुत्र फलत्याग, स्वामीयारे ताहिते ॥ १९ ॥

(१) सहचारी है। (२) सर्वदा है। (३) अर्थ यह:-मीतकरणमां पु... स्वामीके फलमें प्रवृत्ति किसप्रकारसे है यहकहो ॥

सरस्वती उवाच ॥

चिंता चित विकारसुत, देवे वहुत कलेश ॥
काहूं शांतिसुविषे मै, कीजे ताहि निवेश ॥ ११७ ॥

मन उवाच ॥

तुम प्रसन्न अति होइ उर, मोको देहु वताइ ॥
ताको ध्यानसु मै धरो, दुखपुंज मिटजाई ॥ ११८ ॥

सरस्वती उवाच ॥

दोहा।

हे सुत यहअतिगोपहै, करेजु वन्धनमोप ॥
पर आरतउपदेशमैं, कहेन आगम दोप ॥ ११९ ॥

सवैया।

नव नीरद श्याम विसालमहा, उरहार भुजासु कियूर सुहाए ॥
मकराकृत कुंडल काननमै जुगनैनसरोज मनो विगसाए ॥
जनमाहि निदाघसुसीत सरोवर, वेद सदा जिह ब्रह्मवताए ॥
हरिध्याव सदा मनतूं उरमे, निज सूखलहे दुखपुंज मिटाए १२०
सुनके मन दीरघस्वास लयो करजोर दोऊपदशीशझुकायो ॥
भवभेपज मात सुतोहिकह्यो भवसिंधुवह्यो तवमोहि वचायो ॥
करुणारस नैन विसाल द्रवे, पुन सारस्वती गह हाथ उठायो ॥
सुतलाइकतूंउपदेशहिकी, अवनीठभयोइममेमनआयो १२१ ॥

चौपाई।

हेसुत औरप्रकारह कहों। तव संसारमोह सभ दहों ॥
जेतोमोह सुजामे होइं। अंतजने तेतो दुख सोइं ॥ १२२ ॥

(१) शांति विषय कहिये शोकमोहादि रहित मनविषयमें ॥

दोहा ।

पापनके फल नरकतें, जैसे डरपै नीत ॥
त्योंही सुखहै पुंनफल, स्वरगभयो भयभीत ॥ २० ॥
सुकृतको फल भोगसुख, मिले कदाचित् जोइ ॥
करै गिलानि सुउरविषे, अधिक नमाने सोइ ॥ २१ ॥
प्रत्यंक्श्रवण पिखपुरुषको, सफल आपनिरधार ॥
धर्म आपही होइयो, सनै स्थल व्यापार ॥ २२ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

जे उपसरंगसुसंगले, भयो लीन खल मोह ॥
कहो वृतांत सुताहिको, जननी पूछो तोहि ॥ २३ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

मधुमत्तविद्यासहित पुनि, पठे मोह उपसरग ॥
लोभनिमित सुपुरुषको, दिखलाए वहुस्वरग ॥ २४ ॥
जो तिनमाहि आसक्त पुन, पुरुष कदाचित होइ ॥
तौ विवेक उपनिपतको, स्मरनकरे न कोइ ॥ २५ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी वलहार ॥
तिसते वहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ २६ ॥

(१) स्वामीपुरुषको आत्मैकनिष्ठाकूं देखकर सोधर्म कीयाहै वैराग्यरूप फलजिसने अपने आपकूं मानकर स्वयं आपही व्यापारसें रहित होताभया। (२) योगविघ्न।) कचित् सिद्धि ॥

शीशलिजाई ॥
ने बाधव पति भाई । काल जवे गहि शीशलिजाई ॥
सुरखजनअतिदुख पावे । खोहिसिरोरुह धूड़रुलावे ॥१२३॥
उर दगते जलवहे । पेख विवेकी यों उर कहे ॥
संसार बडो दुखदाई । यामे चीत गडो मत राई ॥१२४॥
वैरागसुजांउर होई । समसुख लहे आपम सोई ॥
रस्वती इम जब अलायो । ताहीक्षण वैरागसु आयो ॥१२५॥

वैराग उवाच ॥

सवैया ।

हाविधि एक विडंबकऱ्यो, जिहते सभलोक सुतोहि टगाए ॥
एनवनीलसुनीरजपे, सेलपांतदलंसम देहवनाए ॥
श्रोणत मांस सुमेद वसा, तिनऊपरते तुच अंबर छाए ॥
कणावसनानिनायसनीलक्याचरजातसुखाए ॥ १२६ ॥

दोहा ।

सवंओर श्रोणत मिल्यो, आमिखपिंड निहार ॥
परे सुवायस नील वहु, फोकरसके निवार ॥ १२७ ॥

सवैया ।

हमलमूत कुमूतसभो, पुन आंगसुलेपम भाजन भा
नासकी मल जब निकसे अरु नाहि संभार सुपेनि टरा
तो मुखचन्द कहे जिहको, वहिनादि निहारसके तब न
पित्त रेत रमल गल्यानिकिर, मट आननना दिदंककुमा

(१) [illegible]
[illegible]

देवमाहि माया अहे,
ताको निग्रह भलेकर

शां

काराग्रहमैं डारमन,
कहो काहिमे अवअ

नित्य अनित्य वि
इह अमुत्र वैराग्य
मंत्री अहे यमनेय
मैत्री करुणादिक
है मुक्तेच्छा सहँ
ममता मोह सं

कहो स्वामी
किहिविध अ

जादिन भ
इह अमुत्र

(१)

दोहा।

पापनके फल नरकतें, जैसे डरपै नीत ॥
त्योंही सुखहै पुंनफल, स्वरगभयो भयभीत ॥ २० ॥
सुकृतको फल भोगसुख, मिले कदाचित् जोइ ॥
करै गिलानि सुउरविषे, अधिक नमाने सोइ ॥ २१ ॥
प्रत्यंक्श्रवण पिखपुरुषको, सफल आपनिरधार ॥
धर्म आपही होइयो, सनै स्थल व्यापार ॥ २२ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

जे उपसरंगसुसंगले, भयो लीन खल मोह ॥
कहो वृतांत सुताहिको, जननी पूछो तोहि ॥ २३ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

मधुमत्तविद्यासहित पुनि, पठे मोह उपसरग ॥
लोभनिमित सुपुरुपको, दिखलाए वहुस्वरग ॥ २४ ॥
जो तिनमाहि आसक्त पुन, पुरुप कदाचित होइ ॥
तौ विवेक उपनिपतको, स्मरनकरे न कोइ ॥ २५ ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी वलहार ॥
तिसते वहुरो क्याभयो, मोको करो उचार ॥ २६ ॥

(१) स्वामीपुरुषको आत्मैकनिष्ठाकूं देखकर सोधर्म कीयाहै वैराग्यरूप फलजिसनें ऐसा अपने आपकूं मानकर स्वयं आपही व्यापारसें रहित होताभया। (२) योगविघ्न। (३) काचित् सिद्धि ॥

तव विवेकढिगजाइके, कीनो पुरुष प्रणाम ॥
कह्यो पुरुष तव एहु सुत, कीनो भलो न काम ॥ ८० ॥
ज्ञानवृद्ध तुम हो वडे, हमको पितासमान ॥
यही अर्थ ऋषिदेवता, पूर्वे कीन वपान ॥ ८१ ॥

चौपाई ।

एकसमे आपदके मारे । भूले निगम देव ऋषि सारे ॥
तिनको एक वाल थो जोई । तीर सरस्वती वसियो सोई ॥८२॥

दोहा ।

दधीचऋपीसर पूतवहु, जन्यो सरस्वतीमाहि ॥
नाम सारस्वत ताहिको, धन्यो जगतकेमाहि ॥ ८३ ॥

चौपाई ।

मात सरस्वती तिह प्रतिपाल । रहे कंठ तिहवेद विसाल ॥
तवते समापाइ ऋषिजेते । पूछे परस्पर वेद सुतेते ॥ ८४ ॥
जव तिन कंठन किने निहारे । तवते वालक पास पधारे ॥
कह्यो वालको वेद पढैये । कह्यो वाल पूत सुनलै ये॥८५॥

---

(१) श्रुतिः—प्रजापतिर्ब्रह्मा देवान् सृष्ट्वा केनचिन्निमित्तेनाज्ञानिनो भूयासुरिति देवाञ्शशाप । तदनन्तरंताननुगृह्णन् देवानामन्योन्यं पितृत्वं पुत्रत्वं च ददौ ॥ अर्थ यहः—प्रजाका पति ब्रह्माजी सबदेवताओंको रचिकर तथा कोई कार्यरूप निमित्तकर अज्ञानि होवो इसप्रकार देवताओंको शाप देतेभये तिसके अनन्तर तिनोंपर अनुग्रह करतेहुए ब्रह्माजी देवताओंको परस्पर पितापणा तथा पुत्रपणा देतेभये ॥ इसश्रुतिकर देवते धर्ममार्गमें नष्टसंज्ञावाले होतेभये, पुत्रोंसे वेद पूछिकर पुत्रसंज्ञाको प्राप्तभये इसकहनेकर ज्ञानवृद्धको पितारूपिता दिखाई, यह संक्षेपार्थ है ऋषिप्रसंग आगे कहिते हैं। (२) नारदादि ॥

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई ।

तब उपसर्ग पुरुप ढिगगए । कौतुक एक करत पुन भये ॥
इंद्रजालकी विद्या जोई । लोभहेत दिखलाई सोई॥ २७॥

दोहा ।

निखलसिद्धि प्रगटी तहा, पिखी पुरुप मनलाइ ॥
गुलाबसिंह प्रभावतहि, नीके देत सुनाइ ॥ २८ ॥

सवैया ।

शतयोजनते सभवातसुने, पुन नीरनपै विन नावचलाए ॥
विन ध्येनकिये सभ वेदपुराण, सुभारतलौ इतिहास सुआए॥
विनछन्दपढे सुभछन्दनके, भवमंडलमै सवकाव्य बनाए ॥
सुजराडजेरेसुरथानपिखे, सभलोकनको रुचिप्रेर चलाए २९॥
दृढभीतनते निकसे क्षणमें, तनु मेरुसमान सुभूर बनाए ॥
तनुकंटकपै समतूल रहे, क्षणमे रविमंडलमाहि सुजाए ॥
इहभांति निहारत देवनजू , ढिगआनभलेपद मोल झुकाए॥
इहठौर स्वामिन वासकरो, दुखद्वंदसभै अब तोहि मिटाए ३०

दोहा ।

ईहा जन्म नमृतहै, यह अतिसुंदर देश ॥
ईहाबैठ कलोलकर, मनके हरो कलेश ॥ ३१ ॥

दोहा ।

विद्याधरी अप्सरा, विविध मुग्धं सुरनार ॥
ते पदवन्दनकरतहै, हाथ उपाइनधार ॥ ३२॥

---

(१) कोई सुंदर करतहीं इंद्रजालिक विद्याका अभिमानकर्ता [illegible] [illegible] ।
(२) श्री पा पा मोहनरूप ॥

सवैया ।

याहिपिखो तुम सुंदरता, मदमत्तविलोचन रूप अपारे ॥
दीरघ वारज गंधमिली, अलकै कचघुंघरवंत सुकारे ॥
पीनपयोधर रंभेउरूकमलानन अंजननैन सवारे ॥
दाडमसीरदपांतिवनी, समदामिनि हासहरे तमभारे ॥ ३३ ॥
हाटककी सिकेता धरनी, पुन इंद्रसी नीलमणि बनलाई ॥
एवनपांति नृतांतखिरी, वहुफूल सुगंध चहूंदिश छाई ॥
गुंजत एमधुपावलिया, मनवावलियासुमनोजचलाई ॥
संग विलासनि केलकरो, तपसा तब पुंनफले अवआई ॥३४॥

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी वलिहार ॥
तिसते वहुरों क्याभयो, मोको करो उचार ॥ ३५ ॥

श्रद्धो वाच ॥

दोहा ।

सुन उपसर्गनवाकको, कीनो पुरुप उचार ॥
अतिसुंदर यह भोगसुख, मोमन वाढियो प्यार ॥ ३६ ॥
संकल्पकियो उत्साहमन, स्वामीपुरुप उदार ॥
योंमतिसुन उर खेदगहि, करे सुशांति उचार ॥ ३७ ॥

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

हाधिग हादुख कष्टअति, भई वडी अवहान ॥
पुनरपि जगफासीविषे, पऱ्यो सुपुरुप महान ॥ ३८ ॥

(१) केश । (२) रेती ॥

दोहा।

माता औ उपनिपतमें, वडो अंतरो जान ॥
वहुदृढवन्धनको करे, यह करे वन्ध सभहान ॥ ९४ ॥
पुन उपनिपत विवेकपिख, अभिवन्दन तिहधार ॥
वैठी किंचत दूर तिह, पूछत पुरुष विचार ॥ ९५ ॥
कहो अंब एते दिवस, कहि कहि करे वितीत ॥
उपनिपत वखाने पुरुषको, सुनो इकागर चीत ॥ ९६ ॥

चौपाई।

मठमझार पुन शून अगार। मूरखजनकी संगतधार ॥
आपददिन इहभांति विताए। कहांकहो मै अतिदुःखपाए९७

दोहा।

कह्यो पुरुष वहिततकछु, जानतथे पुन तोहि ॥
उपनिपत कह्यो कहिजानहे, सगल व्यापे मोहि ॥९८॥

चौपाई

ते निजइच्छाके अनुसार। मेरो अरथ सुकरें उचार ॥
अरथ विचारविना इंउ कलपें। द्रवंडागणज्यों वाणी जलपें९९
परको ठाग द्रव्य तिह हरें। याहित मोहि विचारण करें ॥
मै उपनिपत मोक्षको कारण। पेट हेत सठ करें सुधारण१००

दोहा।

पुरुषकह्यो सुन मात पुन, मोप्रति करो उचार ॥
किहविध वासरतेंविते, भाखो सगल विचार ॥ १०१ ॥

(१) मेरे पीछे लग गए। (२) द्रवनागन कहिये जैसे द्राविडदेशस्थपुरोंकी भाषाको सुनकर कल्पना करतेहैं तद्वत् वाणी कहनेभये। वा द्रवनागन कहिये मेंडकोंका समुदाय ॥

मात प्यारी शशिमुखी, मृगनैनी वलिहार ॥
तिसते वहुरो क्याभयो, मोको करो उचार॥ ३९ ॥

श्रद्धोवाच ॥

चौपाई।

तव तांमीत पुरुप इकसार। तर्कनाम तिहकरें उचार ॥
क्रोधभरे दृग ताहि सुलाल। मनो समीर सखां सुविसाल४०
तिन उपसर्गन ओर निहार। वहुरपुरुपको कीन उचार ॥
यहे अस्थानी देव सुजेते। विघनकरें तुमको प्रतितेते४१ ॥
श्रद्धा यावचननकेमाही। मीत कदाचित कीजे नाही ॥
थानअभिमानी देव सुजेते। है अतिधूरत वंचक तेते ॥४२॥
विपर्यवडसापिंडीको डारे। मीनसमान निखलजन मारे ॥
भोगनकी चिंता दुखआग। डारे तोहि न लखे अभाग४३॥

सवैया।

एह अतिसुंदर नारि जितीनरकाऽग्निकी सुशिषा पहिचानो॥
ताहिकि संगमते दुःखजोवहु वारलयो कहितोहि भुलानो॥
तेंतप दीरघ नीतकरे, सभलोक वखानत तोहि स्यानो ॥
भोगनपावकते हटियो, दुःखनाहिभरो सुकह्यो मम मानो४४॥
भवसागरतारणयोग्य जहांज सुतें चिरकालहिते अव पायो॥
मदमत्तविलोचननारि दिखाइ सुचाहतहें सुरतोहि छुडायो॥

(१) सत् असत् विचारका नाम तर्कहै। (२) अग्नि। (३) मधुमतासिद्धि अभिमानी देवते। (४) विषयरूप मांसयुक्तकांटा। (५) मनुष्यशरीर ॥

दोहा।

पुरुषप्रश्न उपनिषत सुन, लागी करन वखान ॥
गुलाबसिंह वहिवाक पुन, साधधरो निजकान॥१०२॥

उपनिषदुवाच ॥

चौपाई।

मै चली वडोपथ· जहां। देखी यज्ञविद्या तहां ॥
कृष्णाजिन अग्निजलाई। इत समधाघृत जूपसुहाई१०३
आलो सभभांजन हाथ। इष्टिपशु मख सोम सुसाथ ॥
र्मकांडकी पद्धति जोई। नीके मुखो अलाए सोई १०४
व मै मनमै कीन विचारा। एहु धरे वहु पुस्तक भारा ॥
क छु ततपछाने मेरा। कोदिन ईहा करों वसेरा१०५॥
व मै ताढिग शीशु झुकायो। तिन मोको पुन एहु अलायो ॥
हु कल्याणी वांछतसार। तव मै तिनसों कीन उचार१०६
अनाथ दूर मम नाह। तोहि समीप वसनकी चाह ॥
व तिन मोको एहु वखानी। कौनकाज तूंकरें कल्याणी१०७
व मैं कह्यो जुपुरुप उदार। ताको रूप सुकरों उचार ॥
तिं विश्वउदे यह होई। जामे रहे लीन पुन सोई१०८॥
किभास निखलजग भासे। सहजानंदसु ज्योति प्रकासे ॥
ांति निरंतर अकेरूपा। निरावयवसुअसंगअनूपा१०९

(१) काष्ठेमयी वर्न। (२) [illegible] [illegible] पात्र। (३) [illegible]
[illegible]
(४) [illegible]
[illegible]
[illegible]

ीरनदी सुचहेंकिम आत्म आप वहायो ॥
कमलीनसुभोगनहेर कहा हुलसायो ४५
ार दिगंवर जावन वास कएहै ॥
तपदीरघ, भोगमहानल पारभएहै ॥
कहें, अरु कांपत भूपतिपांइ पएहै ॥
पर फेर रसातलमाहि गएहै ॥ ४६ ॥
तुही, इहवार कहांसु अघाइ रहेगो ॥
ंउखिसे, भवसागरधारसु फेर वहेगो॥
ाक्षअहै, इह औसर मीत न फेर लहेगो॥
नत जो, नरकाऽग्निमे वहुदुख सहेगो४७

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

शेसुखी, मृगनैनीवलिहार ॥
याभयो, मोको करो उचार॥ ४८ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा ।

कानधर, विपय नस्वास्ति उचार ॥
ोह तज, भयो वैराग उदार ॥ ४९ ॥

सवैया ।

चितार, सुशीश धुन्यो मन ताहि उठायो॥
वेपे, परतो मम मीत सुतोहि वचायो॥
कवी, इह मीत सुनो तव साच वतायो॥
त वढी, भरअंक भले सुसखा गललायो५०

ः निसरत ॥

द्वैत अंधेरो दूर मिटाइ। जामै मिले सुमोक्षी जाइ॥
तत्वज्ञानते पावे मोक्ष। पुरुप पुरातन है निरदोप११०
यहि पुरुप उर ब्रह्म पछानो। ब्रह्म न यांते भिन्न सुमानो॥
विनाज्ञान भासे पुन भेद। ज्ञान जनावे ब्रह्म अभेद १११
ऐसे वचन सुमेउरधार। यज्ञविद्या कीन उचार॥
निखलक्रियाको करता जोई। कैसे पुरुप ब्रह्म पुनहोई११२॥
क्रिया भवफासीपर हरे। ज्ञाननमुक्तिसु काहूं करे॥
वेदकहें निजकर्म सुकरे। जौलौ जीवै नहिपर हरे ११३॥

दोहा।

तातै तेग्रह रापणे, सरेन मेरो काज॥
पर तदपि तूं ऐंवकर, ज्योंमम भाखों आज॥ ११४॥
करताऔ पुन भोक्ता, पुरुप सुअहे विसाल॥
ऐसे निसवासर कह्यो, वसोसु किंचतकाल॥ ११५॥
यामेंकहो सुकोन तव, लागत याजग दोप॥
योंसुन राय विवेक पुन, वोल्यो धार सुरोप॥ ११६॥

चौपाई।

अहो मखनकोधूम सुकारा। यज्ञविद्याके नैन मझारा॥
तांकर मलनदृष्टि वहुभई। यों कुतर्क यांते निरमई११७॥
यज्ञविद्या है निरवुद्ध। ईश्वर पुरुप अकरता शुद्ध॥
चुंवक मणि ज्यों निहचल अहे। तासमीप लोहाकृत गहे११८॥
त्यों ईश्वरकी संगतपाइ। माया लेवे निखल उपाइ॥
अज्ञान जनत वन्धनहे जोई। कैसें कर्म निवारें सोई॥११९॥

(१) श्रुतिः—(कुर्वन्नेवेह कर्माणि, जिजीविषेच्छतम्समाः) अर्थयहः—इस कर्माधिकारभूलोकमें अग्निहोत्रादि कर्मोंकूं कर्ताहूआहीं सौवर्षपर्यंत जीवनेकी इच्छा करे।
(२) ईश्वर औ पुरुषजीवात्मा॥

शांति रुवाच ॥

चौपाई।

भलाभया बहुपुरुप उदार। भयो विरक्त कटे दुःखभार ॥
तूं अब मातसु कहां सिद्धाई। मोको नीके देहु बताई ॥ ५१ ॥

श्रद्धोवाच ॥

दोहा।

पुरुप पठाई मै चली, हेरन आज विवेक ॥
जावों भूपविवेकढिग, मेटिसु विघन अनेक ॥ ५२ ॥

शांति रुवाच ॥

चौपाई।

मोकोवी पुन रायविवेक। पच्यो सुकारज भापो एक ॥
उपनिपतलियावनहेत पठाई। चले सुवेग विलंब मिटाई ॥ ५३ ॥

कवि रुवाच ॥

दोहा।

विवेक उपनिपत समीपवहि, श्रद्धा शांति उदार ॥
गई जब बहुपुरुप पुन, आए सभामझार ॥ ५४ ॥
करविचार उर हर्प अति, लागो करन उचार ॥
गुलावसिंह बहुवाकपुन, सुनो साध उरधार ॥ ५५ ॥

पुरुप उवाच ॥

दोहा।

अहो महातम है वडो, विष्णुभक्तिको लोइ ॥
जांप्रमादवन्धनमिटे, मुक्तिजीव जग होइ ॥ ५६ ॥

ज्यों तमको दूर नकरे। त्यों नही कर्म सुबन्धनहरे ॥
... यज्ञविद्या है जोई। सम्यक अर्थ नजाने सोई १२०

दोहा।

लीनें अंधेरो भवन तम, करेसुजव प्रकास ॥
तव विनज्ञान सुकर्मते, होवे बन्धननास ॥ १२१ ॥
विन आतमके ज्ञानते, मुक्तिपंथ नहि आन ॥
ऐसे वदनसरोजते, करे सुवेदं वखान ॥ १२२ ॥
कह्यो पुरुष उपनिषतको, बहुरों कहा विचार ॥
यज्ञविद्या तोहिको, केर्म कीन उचार ॥ १२३ ॥

उपनिषद्वाच ॥

चौपाई।

यज्ञविद्या बहुर विचार। तोको गाविध कीन उचार ॥
...र्मी गुनेगी संगति जोई। हमरे शिष्य विगारे सोई १२४

दोहा।

फल अनित्य सोजानिके, करन सादर करम ॥
तेरी संगति पाइके, जाने निगम सुगम्म ॥ १२५ ॥
तातें वांछितदेशको, करो गमन ततकाल ॥
तब मैं ताको छांडिके, चाल्यो बहुर उताल ॥ १२६ ॥
कर्मकांडकी सहचरी, फिरी मीमांसा जाइ ॥
बहु प्रकार आंन कर्म, बहु अनिकारी पाइ ॥ १२७ ॥
तातें कह्यो मर्मीप तब, बसोगु [illegible] ॥
तब उन कह्यो मूरखमति, भारी मग्नी विचार ॥ १२...

[illegible]

सवैया।

जिहंमाहि कलेश वडीलहरी, सुभयानक जाहिके पंथ अपारा॥
सुत मीत कलत्र सुबंधु सखा, मकराग्रह ग्रन्थ वडे सुविकारा॥
निजक्रोध महावडवानलहे, तृष्णानिजनागनिरूपसुकारा॥
हरिकी भक्ती पदकंजप्रसाद तऱ्यो भवसागरमें अजभारा॥५७॥

दोहा।

तर्क वडो मम मीतहे, होयो मोहि सहाइ॥
पावक भोग करालते, लीनो मोहि बचाइ॥ ५८॥

कवि रुवाच॥

दोहा।

उपनिपत शांति दोनो तवे, कीनो सभाप्रवेश॥
कीरतिवरमा मोलमणि, वैठो जहाँ नरेश॥ ५९॥

शांति रुवाच॥

दोहा।

चलो सखी सुविवेकका, वदन निहारो आज॥
भाग तुमारे जागया होहि सभे तव काज॥ ६०॥

उपनिषदुवाच॥

दोहा।

सखी स्वामी निरदई, जाहि त्याग्यो मोहि॥
ताको मुख किहविध पिखों तूं मनभीतर जोहि॥ ६१॥

(१) यहां रूपकालंकार है॥

तमज्यों तमको दूर नकरे। त्यों नही कर्म सुवन्धन
तांतै यज्ञविद्या है जोई। सम्यक अर्थ नजाने सोई

दोहा।

लीनें अंधेरो भवन तम, करेसुजव प्रकास ॥
तव विनज्ञान सुकर्मते, होवै वन्धननास ॥ १२१
विन आत्मके ज्ञानते, मुक्तिपंथ नहि आन॥
ऐसे वदनसरोजते, करे सुवेद वखान ॥ १२२ ॥
कह्यो पुरुष उपनिषतको, वहुरों कहो विचार ॥
यज्ञविद्या तोहिको, कैसे कीन उचार ॥ १२३ ॥

उपनिषदुवाच ॥

चौपाई।

यज्ञविद्या वहुर विचार। मोको याविध कीन उचा
सखी सुतेरी संगति जोई। हमरे शिष्य विगारे

दोहा।

फल अनित्य सोजानके, करेन सादर कर्म
तेरी संगति पाइके, जाने नि
तातें वांछतदेशको, करो ग
तव मैं ताको छोडिकर, च
कर्मकांडकी सहचरी, पिख
वहु प्रकार भाषे कर्म, वहु आ
तामें कह्यो समीप तव, वसांतु किंचतकाल ॥
तव उन कह्यो सुकर्मबुद्धि, भाषो मसी विसाल ॥ १२८

(१) अन्धेरोर [illegible] । (२) [illegible]
[illegible]

शांति रुवाच ॥

दोहा ।

देवी स्वामी परोथो, परम विपदके माहि ॥
इहविध एहु उलाहनो, तूं भापतहे ताहिं ॥ ६२ ॥

उपनिपदुवाच ॥

सखी न देखी दुरदशा, मोपर वीती जोइ ॥
जाकर ऐसे तूंकहें, सुनो वखानो सोइ ॥ ६३ ॥

चित्रपदाछन्द ।

भुजदंडतोडिकुपंडितामणिकंठकीवहुफोर ॥
करकाढिकंकणलीतियाकररहीमैवहुशोर ॥
चूडामणिममशीशतेकटिदीनवहुतकलेस ॥
समद्रोपतीकेशांतिमेरेखैंचियातिनकेस ॥ ६४ ॥
कुछ अरथ मेरो औरथो, वहु करहे औरप्रकार ॥
जीवकाके हेत मूरख तोडिफोडि उचार ॥
अर्थको सुअनरथभाखैं देहि वहु संताप ॥
वहुभांति में दुखपाइयो नहिडरें ते सठपाप ॥ ६५ ॥

---

(१) कुत्सित पण्डतोंने मेरे मनन तथा निदिध्यास न करके भुजादंड तोड डारेहैं तहां ब्रह्मरूप विषयसें भिन्न विषयका जो मनन है तथा निदिध्यासन है सोई भुजाओंका तोडना है, धारणा ध्यान समाधिरूप कंठकी मणिहै सोभी ब्रह्मरूप विषयसें भिन्न विषयका धारणा ध्यान समाधि करनाहीं तिसका फोडना है–उपक्रम उपसंहारादि रूप जे वेदांततात्पर्यके पट् लिंग हैं, सोई भये कङ्कण तिनकोभी वेदांततात्पर्यकूं छोडिकर अन्यार्थकेतात्पर्यपर लगावना यही तिनका लैना है–चूडामणि कहिये शिरभूपणकीन्याई आत्मस्वरूप तिसका जो निर्णीत निश्चय है यही शिरसें काटदेनाहै–केश कहिये वेदांतभाग (उपनिष द्भाग) तिसको जो अन्यार्थपर लगाना सोई केशोंका खेंचना है द्रौपतिवत् यह छन्दका तात्पर्य है ॥

चौपाई ।

तव मै कह्यो पुरुषको रूप । मै भाखोंगी परम अनूप ॥
निज शिष्यनको वदन निहार । वहुर मीमांसा कीन उचार १२९
फलउपभोग योग्यहै जोई । पुरुष वखानेगी यह सोई ॥
करो कर्म इम ताहि उचारियो । तव तांशिष्यअनुमोदनधारियो
तव तांशिष्य एकथो जोई । मीमांसाकोरिद अंगम सोई ॥
नाम कुमारलस्वामी वाको । करविचारतिनभाख्योताको ॥
करम निफल उपभोगता जोई । उपनिषत कहे नहआत्मसोई ॥
किंतु कहे अकरता सोई । भुक्ता नाहिकदाचित होई १३२
ऐसे आत्म रूप सुजोई । करम उपयोग्य करे नह सोई ॥
वहुरो वोल्यो अपर विचार । ज्योंहै त्यों ममकरो उचार १३३
पुरुषदोइ जगभीतर गाए । एक जीव इक ईश वताए ॥
मोह अंधेरे जीव दवायो । ईश्वरसकल सुसाक्षीगायो १३४
वांछे करमफल जीव सुजेते । ईश्वर देवे ताको तेते ॥
जीव करममें हे अधिकारी । ईश अकरता वेदउचारी १३५॥
कल्पतवन्ध जीवमें अहै । नित्यमुक्ति परमेश्वर कहै ॥
सुन विवेक भूपति हरखाने । साधुसाधु मुखमाहि वखाने ॥
होवे भले सुदीरघ आयो । जाने याविध अर्थ अलायो ॥
दोन सपरण वेदमे गाए । रहें इकठे सखा वताए ॥ १३७ ॥

(१) यस्माद्विश्वमुदेति, इस पूर्वोक्त श्लोककर पुरुषका रूप कहा । (२) साधुसाधु इसप्रकार स्वीकार किया । (३) (द्वासुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वा द्वत्यनश्नन्न्यो अभिचाकशीति ॥ अर्थयह:—दो पक्षी जीवात्मा परमात्मा सो कैसेहैं साथ रहिनेवाले हैं तथा परस्पर अनुकूल हैं, तथा एक शरीररूप वृक्षकूं आलिङ्गन (स्वीकार,) करतेहैं तिन दोनोंमें एक जो जीव है सो स्वादु (पकं) कर्मके फलकूं भोगताहै और अन्य जो परमात्मा है सो तिस कर्मफलकूं नहीभोक्ताहुआ प्रकाशता है नाम साक्षिरूप होयकर देखताहै ॥

दुर्विदग्ध अनेक मोको मिलेलोक मलीन ॥
विवेकपतिविन जान मोको चहें दासीकीन ॥
केंचित कहें जग सत तूं सुखकरो इह प्रकास ॥
केंचित कहें मतद्वैतमें उपनिपत तूं कर वास ॥ ६६ ॥
इकंकहें जीवपरेशको है भेद एहु वखान ॥
इक कहें भेदाऽभेदको उपनिपत तूं उर मान ॥
इह भांतिव्याकुल मैं करी नहिलखे मूरखवात ॥
ज्यों दुष्टकौरवसभामें भई द्रौपदी विख्यात ॥ ६७ ॥

शांतिरुवाच ॥

चित्रपदाछन्द ।

महामोहके अपराधतें तैं लह्यो है दुख सोइ ॥
देवको अपराध नाहीं होनहारी होइ ॥
मोह मन उपजाइ कामसुपुरुपको गहि लीन ॥
डार विपयआरण्यमें सुविवेक दूरहिकीन ॥ ६८ ॥
कुलनारिके यहधर्म देवीं रच्यो भगवान॥
संपद सुआपदमें सदा बहुचहे निजपति प्रान ॥
अव आउ दर्शनदेहु नीके मिष्टपियाप्रतिवोल ॥
अव फलै तोहि मनोरथा सभहते द्वेपी टोलि ॥ ६९ ॥

उपनिपदुवाच ॥

दोहा ।

पुत्री गीता यों कह्यो, मोहि इकंत विठाइ ॥
स्वामी भरता पुरुपको, करो तोप अवजाइ ॥ ७० ॥

(१) दुष्टबुद्धि । (२) सांख्यमतवाले । (३) मीमांसक । (४) नैयायिक । (५) त्रिदण्डी । (६) उपनिषद् अर्थकी प्रतिपादिकाहोनेकर वा उपनिषद्प्रकरणमें उत्पत्तिहोनेकर गीताको उपनिषद्का पुत्रिपना है ॥

तमज्यों तमको दूर नकरे। त्यों नही कर्म सुबन्धनहं
तांतै यज्ञविद्या है जोई। सम्यक अर्थ नजाने सोई१

दोहा।

लीनै अंधेरो भवन तम, करेसुजब प्रकास ॥
तब विनज्ञान सुकर्मतें, होवै बन्धननास ॥ १२१ ॥
विन आत्मके ज्ञानतें, मुक्तिपंथ नहि आन ॥
ऐसे वदनसरोजतें, करे सुवेद बखान ॥ १२२ ॥
कह्यो पुरुष उपनिषतको, बहुरों कहो विचार ॥
यज्ञविद्या तोहिको, कैसे कीन उचार ॥ १२३ ॥

उपनिषदुवाच ॥

चौपाई।

यज्ञविद्या बहुर विचार। मोको याविध कीन उचार
सखी सुतेरी संगति जोई। हमरे शिष्य बिगारे सोई १२

दोहा।

फल अनित्य सोजानके, करेन सादर करम ॥
तेरी संगति पाइके, जाने निखल सुभरम ॥ १२५ ॥
तातें वांछतदेशको, करो गमन ततकाल ॥
तब मैं ताको छोडिकर, चाली बहुर उताल ॥ १२६ ॥
कर्मकांडकी सहचरी, पिखी मींमांसा जाइ ॥
बहु प्रकार भापे कर्म, बहु अधिकारी पाइ ॥ १२७ ॥
तामें कह्यो समीप तब, बसांसु किंचतकाल ॥
तब उन कह्यो सुकर्मसुद्दि, भापो सखी त्रिसाल ॥ १२८

(१) अन्धेरेका ग्रस्त गृह। (२) कर्मज्ञानात्मुक्ति। आनंदन तु कैवल्यम्।
...ान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय इत्यादिवेद ॥

प्रबोधपूत तव होइगो, बन्धनदये निवार ॥
परस्वामीप्रति कहनते, आवत लाज सुभार ॥

शांतिरुवाच ॥

दोहा ।

विष्णुभक्ति सुविवेकको, कीनो इहै उचार ॥
पेखो स्वामी पुरुष अब, काहेकरें विचार ॥ ७
उपनिषत कह्यो ज्योंकहितहे, सोइकरों वडभाग
गुलावसिंह दोनो तबी, गई अखाडो त्याग ॥ ७
तब विवेकराजा सुनो, श्रद्धासहित सुहाइ ॥
मोहपटलको दूरकर, वऱ्यो सभामहि आइ ॥ ७४ ॥

विवेक उवाच ॥

दोहा ।

श्रद्धे शांति सुगई है, उपनिषतनिहारनकाज ॥
किहविध प्यारी को पिखों, मोहि वखानो आज ॥ ७५
देवसुआय सुथारीया, गई शीस परमान ॥
विष्णुभक्ति पुन शांतिको, कीनो एहु वखान ॥ ७६ ॥
मंदरनाम सुसैलमें, है हरिको अस्थान ॥
तह गीताके निकट वहु, वसत तर्क डरमान ॥ ७७ ॥

विवेक उवाच ॥

तर्कवियाते कहो, कैसे तिह डरभार ॥

श्रद्धोवाच ॥

देव उपनिपत करेगी, तोको एह उचार ॥ ७८ ॥
अब तुम चलो समीप प्रभु, देखो पुरुष निहार ॥
वैठ इकंत सुध्यायहै, तोहि आगमन द्वार ॥ ७९ ॥

चौपाई।

तव मै कह्यो पुरुषको रूप। मै भाखोंगी परम अनूप॥
निज शिष्यनको वदन निहार। वहुर मीमांसा कीन उचार१२९
फलउपभोग योग्यहै जोई। पुरुप वखानेगी यह सोई॥
करो कर्म इम ताहि उचारियो। तव तांशिष्यअनुमोदनधारियो
तव तांशिष्य एकथो जोई। मीमांसाकोरिद अंगम सोई।
नाम कुमारलस्वामी वाको। करविचारतिनभाख्योताको।
करम निफल उपभोगता जोई। उपनिषत कहे नहआत्मसोई।
किंतु कहे अकरता सोई। भुक्ता नाहिकदाचित होई १३२
ऐसे आतम रूप सुजोई। करम उपयोग्य करे नह सोई।
वहुरो वोल्यो अपर विचार। ज्योंहै त्यों ममकरो उचार १३३
पुरुपदोइ जगभीतर गाए। एक जीव इक ईश वताए।
मोह अंधेरे जीव दवायो। ईश्वरसकल सुसाक्षीगायो१३४
वंछि करमफल जीव सुजेते। ईश्वर देवे ताको तेते।
जीव करममें है अधिकारी। ईश अकरता वेदउचारी१३५।
कल्पतवन्ध जीवमै अहै। नित्यमुक्ति परमेश्वर कहै।
सुन विवेक भूपति हरखाने। साधुसाधु मुखमाहि वखाने।
होवे भले सुदीरघ आयो। जाने याविध अर्थ अलायो।
दोन सपरण वेदमै गाए। रहें इकठे सखा वताए॥१३७॥

(१) यस्माद्विश्वमुदेति, इस पूर्वोक्त श्लोककर पुरुषका रूप कहा। (२) साधुसा
इसप्रकार स्वीकार किया। (३) (द्वासुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजा
तयोरन्यः पिप्पलं स्वा द्वत्यनश्नन्यो अभिचाकशीति ॥ अर्थयहः—दो पक्षी जीवात्म
परमात्मा सो कैसे हैं. साथ रहिनेवाले हैं तथा परस्पर अनुकूल हैं, तथा एक शरीररू
वृक्षकूं आलिङ्गन (स्वीकार,) करतेहैं तिन दोनोंमें एक जो जीव है सो स्वादु (पक्व
कर्मके फलकूं भोगताहै और अन्य जो परमात्मा है सो तिस कर्मफलकूं नहीभोक्ताहूआ
प्रकाशता है नाम साक्षिरूप होयकर देखताहै ॥

समान वृक्षमै कीन सुवासा। एक खाइ फल एक उदास
वहुर पुरुष उपनिषत अलयो। कहो मात तहवहुरसुभयो १
सुन शिष्यनको एहु विचार। मिमांसा मोप्रति कीन उचा
जह इच्छा तह कीजेगौन। लायक नाहि हमारे भौन १
मीमांसाते मैचली अगारी। तर्कविद्या और निहारी
वहुते शिष्य सुसंग सुहाए। सेवत ताहिं निरंतर पाए १४
धनकी इच्छा मनमै धार। वैठी भूपति सभामझार
जेलप वितंडावादें विसाला। छेलनिग्रहवहुकरेकराला १
सांख्यविद्या वहुर निहारी। वैठी लांवी भुजा पसारी
पुरुषनको वहुभेद वखाने। ततनकी गणना उर ठाने १४
कहे प्रकृतिसु जगत उपाये। महदादिक क्रमभाख सुनाए
वहुर पतंजलविद्या देखी। पुरुष भेद वहुकहे विसेखी १४
मैसभ इनके निकटि सुगई। भाष्यो इंहावासहित अई
तव तिन कह्यो सुकरम अलाइ। मैपुन वही सुदयो वताइ १४
ईश्वर निखल सुजगत उपाए। पुरुष नाम पुन वही कहाए।
क्रोधयुक्त तामै इक भई। फुरेहोठ यों वात अलई १४८।

(१) (उभयपक्षस्थापनवती विजिगीषुकथा जल्पः) अर्थयह:—वादी प्रतिवादी इन दोनोंपक्षोंके स्थापन करनेहारी ऐसी जो परस्परजीतनकी इच्छावान् वादीप्रतिवादी दोनों को प्रश्नउत्तररूप कथाहै ताका नाम जल्पहै। (२) (स्वपक्षस्थापनहीना विजिगीषुकथा वितंडा) अर्थ यह:—आपने पक्षके स्थापनतें रहित ऐसी जो जीतनेकी इच्छावाले पुरुषोंकी परस्परकथा है ताका नाम वितंडाहै। (३) (तत्त्वबुभुत्सोः कथा वादः) अर्थ यह:—तत्त्ववस्तुके बोधनकी इच्छावाले पुरुषोंकी आपसमें प्रश्नउत्तररूप कथाहै ताका नाम वादहै। (४) (अर्थान्तरेण प्रयुक्तस्य शब्दस्यार्थान्तरकल्पनं छलम्) अर्थ यह—अन्य अभिप्रायसे कथनकियेहुए शब्दके अन्यअर्थके कल्पनका नाम छलहै। (५) [illegible] गुणकी [illegible] नाम प्रकृतिहै ता प्रकृतिसे महत्तत्त्व, महत्तत्त्वसे अहंकार [illegible]

आज कृतार्थभूरभये सुमिटी निजआतमकी कलख।
बोधकरे सभकाजसंपूरन, पूत सुपूतभये सुखदाई ॥ २

दोहा ।

श्रद्धा[1] मति विवेक पुन, शांति यमादिक धार ॥
सर्वात्मप्रभाविश्र जो, सोहम भए उदार ॥ २०८
हरिकी भक्तिप्रसादते, भए कृतार्थ रूप ॥
वन्धन सगल मिटाइया, पाए ज्ञान अनूप ॥ २०
वैठ इकंत सुमोन गहि, मनकर कीनो ध्यान ॥
शांतिभयो भय शोकहन, भयो मोह सभहान ॥ २
यांप्रबोधहित भवनतजि, भवें भवारण्यमाहिं ॥
ताकोपाइ सुमुनिभयो, मैं निजभवन सुमाहिं ॥ २
विष्णुभक्ति आई तवै, उरमै हरप अपार ॥
आइ समीप सुपुरूपके, कीनो एहु उचार ॥ २१२
वहुतकालकर फले जग, मोहि मनोरथ आज ॥
शांतिअराति सुतवपिखों, भये सगल मम काज।
पुरुप कह्यो तव कृपाते, कोफल दुहकर आहि ॥
ऐसै सुखो अलाइकर, पर्‍यो सुचरननमाह ॥ २

दोहा ।

विष्णुभक्ति सुउठाय तिह, कीनो एहु उचार ॥
पूतकहो प्रयकाजकछु, पुन मैं करों तिहार ॥ २
पुरुप कह्यो अव याहिते, परे नप्यारे काज ॥
जीत अराति विवेकनृप, भयो कृतार्थ आज ॥

---

(१) श्रद्धा गुरुवेदवाक्ययोर्विश्वासः,—विवेकमतिर्नित्यानित्यवस्तुविवे न्तिर्पदार्थान्यम्—यमश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥

कौन बलाय कहांते आई। जाने ऐसी बात अलाई ॥
ऐसी बुद्धि तुमारी यातैं। धक्केखातफिरतहै तातैं॥ १४६॥
हापापिनि ईश्वरहैं जोई। किहविध जगत् उपावै सोई ॥
ऐक कहें प्रधान उपायो। एकै कहें प्रमाणु जायो॥ १४७॥
योंसुन रायविवेक सुजोई। लागो करण उचारण सोई ॥
तरकविद्यालो सभ जेती। दुष्टबुद्धि जानी सभतेती १४८
कार्य अहे निखलजग जेतो। ईश्वर सगल उपायो तेतो ॥
एतीवाति नजानत जेई। हैं अति मूरख जगमै तेई १४९॥
प्रधान प्रमाणुलौ समजेते। कलपत अहै सगल पुन तेते ॥
भूमि नीर अरु पावक पवना। कलपत सगल स्वप्नपुरभौना ॥
गन्धर्वनगर पुन इंन्द्र सुजाल। तांसम जान असत बिसाल ॥
सीपरूप ज्यों रज्जु भुजंगा। ब्रह्मअज्ञानजन्योजगअंगा १५१

दोहा।

ब्रह्मज्ञानके उदेते, होवतहै पुन लीन ॥
ज्यों जागेते होतहै, स्वप्न सगल भ्रम खीन ॥ १५२ ॥

चौपाई।

विकारसंक तिहभीतर जोई। मूढमति उर कल्पी सोई ॥
शांति सदा वहिज्योति प्रकासी। नित्यप्रकास सदा अविनासी ॥
जगत गन्धर्व नगर सुउपाए। रंचकनाहि विकार सुपाए ॥
नीलमेघ अरु धूल अपारा। नभमें करे नरंच विकारा॥ १५४

पुरुष उवाच ॥

चौपाई।

संदेहदवानल चीतमझारी। अंमृत सिंच विवेक निवारी ॥
मेरो चीतसु अतिहरपयो। भलो विचारविवेक अलयो १५५

(१) सांख्यी। (२) नैयायिक ॥

दोहा ।

पुरुष कह्यो उपनिषतको, बहुरों करो प्रकास ॥
तरकविद्या पासतैं, कैसे भई उदास ॥ १५६ ॥

उपनिषदुवाच ॥

सर्वभईते क्रोध मन, ऐसैं कौन वखान ॥
कहे जीवकी मुक्ति यह, सकलविश्वकर हान ॥ १५७ ॥
तातें नास्तकपंथको, एअब करे उचार ॥
केसनतें याको गहो, करो भलीविध मार ॥ १५८ ॥

चौपाई ।

पुरुष नारायण ईश्वर जोई । तव मै चीत चितार्‍यो सोई ॥
कह्यो पुरुष ईश्वरहै कोइ । तव करुणाकर जानो सोइ १५९
उपनिषत्कह्यो जो आपनजाने । ताको उत्तर कौन वखाने ॥
हरपसंयुक्त पुरुष पुन कहे । किहाविध मेपरमेश्वर अहे १६०
उपनिषतकह्यो परमेश्वर जोई । तोतेभिन्न नही पुन सोई ॥
तूं परमेश्वरते नही न्यारो । ऐसे सदा चीत निरधारो १६१

दोहा ।

माया अहै अनादि जो, ताकी संगति पाइ ॥
जल सूर्य प्रतिविंवज्यों, भेदवंत दिखलाइ ॥ १६२ ॥
वहुरो पुरुष विवेक प्रति, कह्यो जोर कर दोइ ॥
भगवन अर्थ उपनिषतको, कह्यो न निश्चै होइ ॥ १६३ ॥

चौपाई ।

मे अंवच्छिन्न भिन्न पुन जोई । जरामरण धरमा पुन सोई ॥
नित्यअनंद चिदात्म गाए । परंब्रह्म मम रूप वताए १६४ ॥

(१) अपंग वच्छिन्न । (२) उपनिष्त् ॥

कह्यो विवेक पदार्थज्ञान। अवलग तोहिभयो नहि भान॥
पदार्थज्ञान उपावसु जोई। कह्यो पुरुप अव भापोसोई १६५
कह्यो विवेक सुनो मनलाई। तोको देहु उपाइ वताई॥
तत्वंपदके अर्थ भनीजे। एकवाच्यपुन लक्ष कहीजे १६६
वाच्य अभिन्न कदाचित नाही। लक्षमाहि विरोधसु नाही॥
लक्ष चिदात्म है ये जोई। सो मैंयों उर चितवो सोई १६७
निखल उपाधिसु दूरं निवारो। वहुरो तत अर्थ निरधारो॥
तत्वमसि यों भाखे वेद। तातें निखल मिटावे भेद १६८
निखलद्वैतको दूर निवारो। चिदानंद उर आत्म धारो॥
वहुर पुरुप उपनिपत अलयो। तिहउपरंत कहो क्याभयो १६९

उपनिषद्वाच ॥

दोहा।

तवते सर्व सुदुष्टमति, मोहि फरनकेकाज॥
दौरीचारों ओरते, मैंतव चाली भाज॥ १७०॥
सीतापति रघुवंशमणि, रामशील यशभौन॥
जिह दंडकवनमे गए, तिह मैकीनो गौन॥ १७१॥
तिह मंदर परवतविपे, मधुसूदन असथान॥
ताहिनिकट जोदशामें, भई सुकरों वखान॥ १७२॥

चौपाई।

किंनहूंमे भुजदंड प्रहारे। तोडि मणि करकंकण तारे॥
चूडामणि शीशते लीनो। खैंचे केश वहुतदुःख दीनो १७३

(१) केईकपण्डतोंने. संधिविभक्तिरूप जो मेरेभुजदण्डहैं सो तोडडारेहैं तथा कंठकी मणिस्थानी अहंग्रह उपासनाहै सो फोडडारीहै अर्थात् खेंचकर मनीक उपासनामें स्थापन करेहें औ करके कंकणस्थानापन्न निष्कामकर्म तथा निधिहैं इनदोनोको हरणकरे हैं और चूडामणीस्थानापन्न जो तत्वमस्यादिमहावाक्यहैं तिनको मतवादियोंने शीसकी न्याई मथान

दुरविदग्ध वहुता वनुसाही। दासीकरन सुमेंउरचाही
विछुरी मम विवेकते जान।वहुविधमेदुःखदयोअजान१७
कह्यो पुरुष वहुरोंभयो जोई। मोको सगल सुनावो सोई।
कहि उपनिषत सुनो मनलाई। तव मेरें हरि भये सहाई १७
तव मधुसूदनके असथान। निकसे पुरुष परमवलवान।
लेकरगदा सगलतेडानी। तव मोको वहि छाडि पलानी।

राजोवाच॥

दोहा।

भागविहीन विमूढजे, करेंते अपमान॥
सहे न उरमै रंच वहु, जगसाक्षी भगवान॥ १७७॥

पुरुष उवाच॥

वैदुष्टादशदिश गयी, दंडक विपनमझार॥
तवते कौन सुविधभई, मोको करो उचार॥ १७८॥

उपनिषदुवाच॥

चौपाई।

गीताके आश्रमकीओरा। दौरी मे उर डऱ्यो सुमेरा॥
नूपर टूटिपरी पथमाही। वरी जाय आश्रमकेमाही१७९
तव गीता दुहिता मम प्यारी। पेखिकह्योआई महतारी॥
मातमातयों मुखो अलायो। मेंपदपंकजशीशु झुकायो१८०

-मुझ उपनिषदमें लीयाहै अर्थात् अंशअंशी, विकारविकारी, कार्यकारण, मकाश्यमकाशक, आधेयआधार, उपासकउपास्यादिक भाव (ज्ञान) कर अखंड अर्थका खंडन कियाहै तथा अवांतरवाक्यरूपी केश तिनवादियोंने मेरे खेंचेहैं भाव यहहै–(सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म) इसअवांतरवाक्यमें सताजातिमानीहै तथा ज्ञानादिक गुणमानतेहैं इति।
(१) चरणभूषण। (२) मेरे चरणोंमें शिर निवाया॥

भलीभांति मुहि अंकमिलाइ। हेमपीठमैं ल्यो बैठाइ॥
भयो.वृत्तांत निखल तिनजान्यो।वहुर सुमोकोएहु वखान्यो १८१

दोहा।

मात डरो नहि चीतमें, तेरो कर अपमान॥
दुष्ट यथेष्टमें रमेंजे, ताहि हने भगवान॥ १८२॥

चौपाई।

श्रीपति योंमुख आप वखाने। दुष्टसुजे उपनिपत नमाने॥
क्रूर नराधम हैं जग जेते। असुरयोनिमें डरों तेते॥१८३॥
सुनकर पुरुप अनंद तव भयो। यों मुखमाहि सुवैन अलयो॥
सुन्यो अर्थमैं पूर्व जोई। उपनिपत करावत निश्चे सोई॥

कवि रुवाच॥

दोहा।

श्रवण मनन पूर्णभयो, निखल संदेह निवार॥
निदध्यासनकी चाह उर, भई सुपुरुप उदार॥ १८५॥

चौपाई।

याअवसर निदध्यासन आयो। वैठ सभामैं एहु अलायो॥
विष्णुभक्तिने मोहि पठायो। तातै मै ईहाचल आयो१८६॥
गूढ हमारो आसय जोई।उपनिपत विवेकप्रति भाखोसोई
दोनोको यहवात प्रकास। पुरुपमाहि तूं करी निवास१८७

(१)गीतामें कहाहैः—तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्। क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेवयोनिषु॥ अर्थयहः—हेअर्जुन—द्वेषकरणेहारे तथा क्रूर तथा नरोंविषेअधम तथा निरंतर अशुभकर्मोंकूं करणेहारे ऐसे तिन आसुरमाकृतिपुरुषोंकूं मैं परमेश्वर अत्यन्त क्रूर व्याघ्रसर्पादिक योनियोंविषे ही गेरताहूं। (२) श्रवणंनामाद्वैते ब्रह्मण्युपनिषदांतात्पर्यावधारणम्। मननं नाम युक्तिभिरनुचिन्तनम्। निदिध्यासनं नाम विजातीयप्रत्ययतिरस्कारेण सजातीयप्रत्ययप्रवाहीकरणम्॥

वहुर विलोकसु एहु वखानी। यह वैठी उपनिषत सुरानी॥
पुरुष विवेकसंग सुहाए। चलो नजीक सुदेहु सुनाए १८८
ऐसवखाननिकट वहुगयो। उपनिषतसमीप सुवाक अलयो
देवी विष्णुभक्ति है जोई। तादि वखान्यो सुनिये सोई १८९
संकल्पयोनि देवता सारी। यह नीकेम आप निहारी॥
उपनिषतसंगभां तूं अव भई। कंन्या तेउरमे निरमई॥१९०॥
और प्रवोधचन्द्र सुत जान। मेरो कह्यो सुसत्य पछान॥
क्रूरसुभावजु कन्या अहै। उपजी निखलसंवन्धी देह १९१
व्रह्मविद्या कन्या जोई। मनमें करो संचारण सोई॥
संकर्पणविद्याको उरधार। मनके उदर कन्या डार १९२॥
प्रवोधचन्द्र पूत पुन जोई। पुरुषसमर्पणकीजे सोई॥
विवेकसहित तूं मेरे पास। उपनिषत करो अव सहजनिवास

दोहा।

विष्णुभक्ति जोभाष्यो, सोईकरौं न और॥
योंकहि संग विवेकके, गई इकंत सुठौर॥ १९४॥
निदध्यासन तव पुरुषके, कीनो आन प्रवेश॥
धन्यो पुरुष उर ध्यान तव, जाकर हरे कलेश १९५॥
नेपथ्यमाहि प्रवेशकर, दोनो नयन मिलाइ॥
अद्भुतरूपध्याय उर, वोल्यो सहज सुभाइ॥ १९६॥

(१) संकल्पमात्रतेउत्पत्तिहै जिनोकी न मैथुनसें तथा चश्रुतिः—(ब्रह्म वा इदमग्र आसीत्) इहासें आरंभकरके (इदंसर्वमभवत्) ईहांपर्यंतसंकल्पप्रभवत्व दिखायाहै वृहदारण्यकमें इसप्रकारमे योगसामार्थ्यजन्यध्यानसे जान्या। (२) विवेककेसंकल्पसें। (३) जगत्का नाशक होनेते क्रूरसुभाववाली है। (४) आत्मसाक्षात्कार रूपा। (५) योगकर आकर्षणरूप। (६) निरतिशय ब्रह्मप्रकाशक॥

मन वक्षस्थल फोरके, कन्या भई प्रकास ॥
सहत समग्री मोहको, कीनो एक ग्रास ॥ १९७ ॥
तडता समदमकी महां, दिशको तिमर मिटाइ ॥
अंतरध्यानक्षणमें भई, ऐसोरूप दिखाइ ॥ १९८ ॥
यह प्रबोधशशि उपज्यो, ताको भ्रात विसाल ॥
सभाप्रवेश प्रबोध तव, कीनो वाहूंकाल ॥ १९९ ॥
कहांगयो किनभयो भव, लीनभयो ततकाल ॥
जाउपजेते भयो यों, सोमें बोध विसाल ॥ २०० ॥
परकरमदेपिखभाष्यो, यहहै पुरुष उदार ॥
चलों समीप सु याहिके, करों सुपाद जुहार ॥ २०१ ॥
जाइसमीप सुपुरुषके, भगवनमुखो उचार ॥
हौं प्रबोधउपनिपत सुत, वन्दो पाद तिहार ॥ २०२ ॥
पुरुष बिलोक आनंदउर, हेसुत परम अनूप ॥
मिलोसु मेरे अंकमें, कीजे शीतल रूप ॥ २०३ ॥
मिल्यो प्रबोध सुपुरुषको, शीतलचन्द उदार ॥
पुरुष अनंद सुहोय उर, लागो करन उचार ॥ २०४ ॥
अहो तिमर पट फाटियो, भयो प्रभात अनूप ॥
निखलकलेश विनाशया, पायो परम सरूप ॥ २०५ ॥
मोह अंधेरें विनाशकर, नींद विकल्प सुमार ॥
बोधशशि यह ऊपजो, जाकी प्रभा अपार ॥ २०६ ॥

सवैया।

आज परातम पूरन जो, वहि पूरन रूप सुदेत दिखाई ॥
बन्धन जो सभ दूरभये, रविसी उरअंतर ऊजलताई ॥

(१)-(संसारयन्त्रपगमा बोधः प्रातः क्षणो मतः) अर्थयहः—संसाररूपी रात्रीके जानेसे बोधही प्रातःक्षण मान्याहै। (२) अज्ञान। (३) भ्रमही निंदाहै ॥

आज कृतार्थभूरभये सुमिटी निजआतमकी कलखाई ॥
वोधकरे सभकाजसंपूरन, पूत सुपूतभये सुखदाई ॥ २०७ ॥

दोहा ।

श्रद्धा मति विवेक पुन, शांति यमादिक धार ॥
सर्वात्मप्रभविश्व जो, सोहम भए उदार ॥ २०८ ॥
हरिकी भक्तिप्रसादते, भए कृतार्थ रूप ॥
वन्धन सगल मिटाइया, पाए ज्ञान अनूप ॥ २०९ ॥
वैठ इकंत सुमोन गहि, मनकर कीनो ध्यान ॥
शांतिभयो भय शोकहन, भयो मोह सभहान ॥ २१० ॥
यांप्रवोधहित भवनतजि, भवें भवारण्यमाहिं ॥
ताकोपाइ सुमुनिभयो, मैं निजभवन सुमाहिं ॥ २११ ॥
विष्णुभक्ति आई तवै, उरमै हरप अपार ॥
आइ समीप सुपुरुपके, कीनो एहु उचार ॥ २१२ ॥
वहुतकालकर फले जग, मोहि मनोरथ आज ॥
शांतिअराति सुतवपिखों, भये सगल मम काज ॥ २१३
पुरुप कह्यो तव कृपाते, कोफल दुहकर आहि ॥
ऐसे मुखो अलाइकर, पर्‍यो सुचरननमाह ॥ २१४ ॥

दोहा ।

विष्णुभक्ति सुउठाय तिह, कीनो एहु उचार ॥
पूतकहो प्रयकाजकछु, पुन मैं करों तिहार ॥ २१५ ॥
पुरुप कह्यो अव याहिते, परे नप्यारे काज ॥
जीत अराति विवेकनृप, भयो कृतार्थ आज ॥ २१६ ॥

(१) श्रद्धा गुरुवेदवाक्ययोर्विश्वासः,–विवेकमतिर्नित्यानित्यवस्तुविवेकविषया–शान्तेर्देदार्शान्यम्–यमश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥

रुजविहीन आनंदपद, थाप्यो ताहि सुमोहि ॥
विष्णुभक्तिपदवन्दना, करेकाज सभ तोहि ॥ २१७ ॥

सवैया।

यद्यपि पूर्ण आहि मनोरथ तदपि मात सुएहु वरे ॥
रुचिके अनुसार करें वरपा, घनभूपति भूमिसुपालकरे ॥
तेंकरुणाकर लोक महात्म, आत्मको तम दूरहरें ॥
भवसागरधार विपे ममता, गहि वोधजहाजसु पार परें ॥२१८॥

दोहा।

प्रत्यक्तत्व निज आत्मा, कीरति वरमाभूप ॥
मनोवृत्ति सभनाटकै, कोविदलखैं अनूप ॥ २१९॥

सवैया।

यह नाटकहे रसुभूपतिके उरमाहि सुभाऽसुभ ज्ञानभयो ॥
तजिया जगमाहि कुपंथ वडो शुभपंथ महीपति चीतलयो ॥
विसमाय रह्यो उरभीतर सो सुशिल्पनको वहु दानदयो ॥
वहुनाटकहैं भवमंडलमें नरनाहनको यह नाटनयो ॥२२० ॥

दोहा।

कहनेको यह नाटहे, दरपन अहै अचार ॥
पावै पावन मोक्षको, कीने याहि विचार ॥ २२१ ॥
गौरी जननी लोकमें, राया जनक महान ॥
गुलावसिंह सुत ताहिके, नाटक कीन वखान ॥२२२ ॥
कीरति पूरनलोकमै, पूरण परमानंद ॥
पूरन पददातारप्रभु, वन्दो श्रीरघुनंद ॥ २२३ ॥

(१) अन्तः करणमें जो अज्ञान ॥